कुरुक्षेत्र

पशुपालन

महिला समृद्धि योजना के अंतर्गत 10 लाख से अधिक महिलाओं ने खाते खोले

महिला समृद्धि योजना के प्रति ग्रामीण महिलाओं में अभूतपूर्व उत्साह देखने को मिल रहा है। पिछले वर्ष 2 अक्तूबर को प्रारंभ की गई इस योजना के अंतर्गत मई 1994 तक लगभग 10,35,000 महिलाओं ने अपने खाते खोलकर 13 करोड़ 28 लाख रुपये जमा कराये।

इस योजना के अंतर्गत हर ग्रामीण वयस्क महिला को ग्रामीण डाकघर में महिला समृद्धि योजना खाता खोलने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। एक वर्ष में 300 रुपये तक की राशि के लिए सरकार 25 प्रतिशत का योगदान देती है। खाते में जमाकर्ता की सुविधा के अनुसार चार रुपये के गुणकों में राशि जमा की जा सकती है।

राष्ट्रीय स्तर पर योजना की निगरानी रखने के लिए योजना आयोग में एक निगरानी दल गठित किया गया है। राज्य, संभाग और जिला स्तरों पर समीक्षा समितियों का गठन किया गया है। इस योजना की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें हर स्तर पर गैर-सरकारी संगठनों का सहयोग लिया जा रहा है।

महिला एवं बाल विकास विभाग इस योजना के लिए सर्वोच्च विभाग है। बेहतर समन्वय सुनिश्चित करने के लिए इसके सचिव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई है।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 39 अंक 10 श्रावण-भाद्रपद 1916, अगस्त 1994

कार्यकारी संपादक	:	बलदेव सिंह मदान
उप संपादक	:	ललिता जोशी
उप निदेशक (उत्पादन)	:	एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक	:	बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक	:	जॉन नाग
व्यापार कार्यकारी	:	वी० एस० रावत
आवरण सज्जा	:	अलका

एक प्रति : तीन रुपये वार्षिक चंदा : 30 रुपये

फोटो साभार : रमेश चंद्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण-विकास मंत्रालय

इस अंक में

ग्रामीण विकास में राव सरकार के तीन वर्ष की उपलब्धियां	राम बिहारी विश्वकर्मा	3
भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुपालन का योगदान	डा० रमेश दत्त शर्मा	7
ग्रामीण विकास में पशुपालन	डा० (कु०) पुष्पा अग्रवाल	11
ग्रामीण विकास के कारगर आयामों में पशुपालन	डा० कृष्ण कुमार सिंह	14
खरगोश पालन : सहायक उद्योग धंधा	गंगा शरण सैनी	16
राष्ट्रीय महिला कोष	इन्दिरा मिश्र	19
नया मोड़ (कहानी)	योगेन्द्र पाल सिंह	20
पंचायती राज और राजीव गांधी	सुभाष चन्द्र 'सत्य'	24
पंचायती राज और महिलाएं	सुन्दर लाल कुकरेजा	28
पेय जल अपना, सच होता सपना	वेद प्रकाश अरोड़ा	31
प्राकृतिक संपदा का संरक्षण करते हुए उपयोग कीजिए	डी० के० पाण्डेय	35
मादक पदार्थों का भयावह संकट	राजेन्द्र उपाध्याय	36
पर्वतीय क्षेत्रों में बेमौसमी सब्जी उत्पादन	मोहन चन्द्र पाण्डे	39
अपना गांव, अपना काम	परमेश चन्द्र	40

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 384888

पाठकों के विचार

'कुरुक्षेत्र' का अप्रैल, 1994 अंक पशुपालन की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें 'गर्मी में पशुओं की देखभाल' जैसा सामयिक लेख प्रकाशित हुआ है। श्री गंगा शरण सैनी का लेख 'बकरी पालन लाभकारी व्यवसाय' प्रेरणास्पद तथा ज्ञानवर्धक है।

भारत गांवों का देश है। गांव-गांव में पशुपालन मिश्रित कृषि को अपनाया गया है। ऐसी स्थिति में 'बकरी पालन : लाभकारी व्यवसाय' नामक लेख से ग्रामीण विकास को बल मिलेगा। भारत में कुल कृषकों की संख्या में लगभग दो तिहाई संख्या लघु तथा सीमांत कृषकों की है। बकरी को गरीब की गाय कहा गया है। लघु और सीमांत कृषकों के आर्थिक विकास के लिए बकरी पालन नई दिशा दे सकता है। देश में गरीबी की रेखा से नीचे रह रही लगभग 29 प्रतिशत जनता को इस रेखा से ऊपर उठने में बकरी पालन सुदृढ़ आधार बन सकता है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत भी पशुपालन में बकरी पालन को प्राथमिकता दी गई है।

ग्रामवासियों का दायित्व है कि वे शासन की योजनाओं का लाभ उठायें तथा कृषि के साथ पशुपालन भी अपनायें।

भागचन्द्र जैन,
सहायक प्राध्यापक (कृषि अर्थशास्त्र),
इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय,
रायपुर - 492012 (म० प्र०)

हमेशा की तरह 'कुरुक्षेत्र' (अप्रैल अंक) पढ़ा और एक नियमित पाठक होने के नाते 'कुरुक्षेत्र' के बारे में यही निष्कर्ष निकाल पाता हूं कि ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ यह मासिक स्वरोजगार के क्षेत्र में भी मार्गदर्शक है, फलतः प्रत्येक अंक का संग्रहण अनिवार्य हो जाता है।

अप्रैल अंक में ही "छात्र संकल्प और परिणति" शीर्षक के अंतर्गत राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उत्तरकाशी के राष्ट्रीय सेवा योजना के छात्रों द्वारा अठाली ग्राम में विकासोन्मुख उल्लेखनीय कार्यकलापों के बारे में पढ़ा। भारत सरकार द्वारा 1969 से लगभग सभी विश्वविद्यालयों में चलाई जा रही राष्ट्रीय सेवा योजना की ग्रामीण परियोजना संबंधी कार्यों का उद्देश्य भी यही है कि योजना के छात्र-स्वयंसेवक ग्रामीणों की भागीदारी से ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास कर सकें। मसलन निरक्षरता-उन्मूलन, स्वास्थ्य, सफाई, जनसंख्या नियंत्रण, ग्रामीण सहकारिता का विकास, सड़कों आदि का निर्माण जैसे क्रियाकलापों से स्वच्छ व शिक्षित ग्रामीण परिवेश का निर्माण करें।

पत्रिका के अन्य आलेखों के साथ-साथ पवन ऊर्जा और खासकर बैलगाड़ी विषयक आलेख ने विशेष प्रभावित किया। ऐसे लेख अन्यत्र शायद ही पढ़ने को मिलते हैं।

आनन्दवर्धन प्रियवत्सलम,
राष्ट्रीय सेवा योजना,
पटना विश्वविद्यालय,
पटना - 800005

'कुरुक्षेत्र' का अरसे से पाठक हूं। निःसंदेह यह पत्रिका ग्राम्य विकास की अलख जगाकर राष्ट्रीय सेवा का उत्तरदायित्व निभा रही है। यह सत्य है कि भारत जैसे ग्राम प्रधान एवं विकासशील देश में जब तक आम आदमी और प्रत्येक ग्रामवासी विकास की मुख्यधारा से संबद्ध नहीं होगा तब तक इस राष्ट्र का वास्तविक अर्थों में विकास होना असंभव है।

अप्रैल अंक में प्रकाशित लेख "सन 2000 तक सबको शिक्षा का लक्ष्य : संभव है बशर्ते...." रोचक लगा। यह तो पूर्णरूपेण सत्य है कि सरकार सदी के अंत तक शत प्रतिशत साक्षरता लाने हेतु कटिबद्ध है परंतु राह में अनेक अवरोध हैं। जैसे योजनाओं के क्रियान्वयन में अफसरशाही, लालफीताशाही, अकर्मण्यता, योजनाओं की अनिश्चित दिशा, ग्रामीणों का शिक्षा के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण, स्त्री शिक्षा के प्रति उदासीनता आदि। वस्तुतः यदि ये अवरोध हट जाएं तो इक्कीसवीं सदी में हमारा प्रवेश संपूर्ण साक्षरता के साथ होना असंभव नहीं है।

प्रो० शरद नारायण खरे,
शासकीय कन्या महाविद्यालय,
मंडला (मध्य प्रदेश)-481661

ग्रामीण विकास में राव सरकार के तीन वर्ष की उपलब्धियां

रामबिहारी विश्वकर्मा

औद्योगिकरण और आधुनिकीकरण की तेज रफ्तार के बावजूद भारत की तीन चौथाई के लगभग आबादी अब भी ग्रामीण परिवेश में रहती है और कृषि तथा उससे संबंधित काम धंधे देश के अधिकतर लोगों के गुजर-बसर का साधन हैं। ग्रामीण क्षेत्रों पर दृष्टि डालने पर हम पाते हैं कि देश की आजादी के लगभग पांच दशक बीत जाने पर भी अभी ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादातर लोगों का जीवन गरीबी में ही बीत रहा है। हमारी कल्याणकारी सरकार ने लोगों की गरीबी को मिटाने के लिये लगातार अनेक योजनाएं चलाई हैं, तरह-तरह के उपाय किये हैं और उन उपायों का काफी हद तक लाभ ग्रामीणों को मिला है लेकिन अब भी देश में ऐसे करोड़ों लोग हैं, जिनकी आमदनी साल में बड़ी मुश्किल से ग्यारह हजार रुपये तक पहुंच पाती है जोकि गरीबी की रेखा है।

हमारी वर्तमान सरकार ने सत्ता संभालने के बाद से ही ग्रामीण गरीबी को दूर करने के लिये अनेक लक्ष्य निर्धारित किये और उन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए लगातार प्रयास किये। वर्तमान सरकार ने सत्ता संभालने के साथ ही यह ध्यान दिया कि यदि गांव के लोगों का जीवन-स्तर सुधारना है तो उस के लिये सबसे जरूरी है कि वहां की गरीबी पर सीधा प्रहार किया जाए। इसके लिये सबसे पहले यह आवश्यकता महसूस की गई कि यह पता लगाया जाए कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले कौन-कौन से लोग हैं ताकि उनकी पहचान करके उन्हें आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराई जाएं। सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिये रोजगार उपलब्ध कराने, रोजगार के पर्याप्त अवसर जुटाने, सभी लोगों को साक्षर बनाने, स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, स्वच्छ पेयजल, खाद्यान्नों के मामले में आत्म-निर्भरता लाने, सभी को मकान उपलब्ध कराने आदि उद्देश्यों को पूरा करने के लिये पहले से चले आ रहे अनेक कार्यक्रमों की रूप-रेखा में सुधार किया तथा उन्हें नये सिरे से संचालित करने का प्रयास किया। सातवीं पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण क्षेत्र के विकास के लिए 10,650 करोड़ रुपये निर्धारित किये गये थे, लेकिन वर्तमान सरकार ने आठवीं योजना में इस रकम को बढ़ाकर तिगुना यानी 30 हजार करोड़ रुपये कर दिया है।

केन्द्र सरकार ने यह निश्चय किया है कि गांवों के लोगों को अपने रहन-सहन में सुधार लाने के लिये आवश्यक नीतियां और कार्यक्रम अपने क्षेत्र और स्थान की आवश्यकताओं के अनुसार खुद तय करने चाहिये। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अप्रैल 1993 में 73वां संविधान संशोधन अधिनियम लागू किया गया। इस के अनुसार नयी पंचायती राज व्यवस्था लागू की गयी। पंचायतों के लिये नियमित रूप से चुनाव कराने के लिये स्वतंत्र चुनाव आयोग के गठन की व्यवस्था की गयी है। पंचायतों को पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने के लिये हर राज्य में वित्त आयोग स्थापित करने का निश्चय किया गया है। पंचायती राज प्रणाली में प्रत्यक्ष चुनाव के जरिये सभी स्थान भरे जायेंगे। इस में एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित करने का निश्चय किया गया है। अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के लिये स्थान तो उनके प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के लिये लागू किये ही जायेंगे। निचले स्तर पर सही मायने में लोकतंत्र लाने के लिये यह एक साहस-भरा कदम है। लेकिन इस स्थानीय पंचायती राज संस्थाओं की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि हर व्यक्ति इसमें अपना कितना योगदान करता है।

इस के अलावा प्रधानमंत्री ने हर सांसद को अपने क्षेत्र में विकास योजनाओं में योगदान करने के लिये एक करोड़ रुपये तक का उपयोग करने की व्यवस्था की घोषणा की है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 1993-94 में हर सांसद को अपने क्षेत्र में विकास कार्यों के लिये पांच लाख रुपये दिये गये।

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार पुरुषों और स्त्रियों के लिये अतिरिक्त लाभकारी रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य से जवाहर रोजगार योजना लागू है। पिछले तीन वर्षों के दौरान जवाहर रोजगार योजना के तहत 26,680 लाख मानव श्रम दिवस के बराबर रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये गये। आठवीं पंचवर्षीय योजना में जवाहर रोजगार योजना के लिये 18,400 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है। इसी कार्यक्रम के अंतर्गत दस लाख कुंओं की योजना भी 1988-89 में शुरू की गयी थी। यह योजना जवाहर रोजगार योजना की एक उप-योजना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले लोगों, छोटे किसानों और बंधुआ मजदूरों के जीवन-स्तर में सुधार लाना है।

इस कार्यक्रम के तहत 1988-89 से पिछले वर्ष तक 4.97 लाख कुंओं का निर्माण किया जा चुका है, जिस पर 1417.14 करोड़ रुपये खर्च किये जा चुके हैं। केन्द्रीय सरकार ने 1993-94 में इस उद्देश्य के लिये 763.80 करोड़ रुपये आवंटित किये।

ग्रामीण इलाकों में लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने के लिये जवाहर रोजगार योजना के तहत पिछले वित्त वर्ष के दौरान 329.66 करोड़ रुपये उपलब्ध कराये गये। 1994-95 के लिये 3,855 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। गांवों के दस्तकारों को हुनरमंद बनाना और इस के लिये उन्हें आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराना सरकार का एक प्रमुख कार्यक्रम रहा है। 1993-94 के दौरान एक सौ एक जिलों के 1,29,000 दस्तकारों को औजारों की किट देने का कार्यक्रम रखा गया। इस कार्यक्रम के तहत आठवीं योजना में ग्रामीण क्षेत्रों के पांच लाख कारीगारों को इस तरह के उपकरण देने का कार्यक्रम है। इस के तहत हर दस्तकार को दो हजार रुपये मूल्य के औजार के किट दिये जाते हैं। दस्तकार दस प्रतिशत लागत खुद देता है बाकी 90 प्रतिशत रकम केन्द्र से अनुदान के रूप में उपलब्ध कराई जाती है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत लकड़ी, लोहे, पत्थर, चमड़े, बर्तन और बेंत तथा बांस की चीजें बनाने वाले दस्तकारों को बहुत लाभ पहुंचा है।

इसके अलावा पिछले वर्ष 15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री ने लाल किले की ऐतिहासिक प्राचीर से ग्रामीणों को उन दिनों रोजगार दिलाने का आश्वासन दिया जबकि खेती का काम ज्यादा नहीं होता। सुनिश्चित रोजगार योजना के नाम से प्रसिद्ध यह योजना 2 अक्तूबर 1993 को प्रारंभ की गई। इसमें रोजगार के इच्छुक 18 वर्ष से अधिक और 60 वर्ष से कम उम्र के ग्रामीण पुरूषों और महिलाओं को 100 दिनों के बराबर अकुशल मजदूरी का आश्वासन दिया जाता है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत, प्रति परिवार अधिकतम दो बालिगों को उन दिनों 100 दिनों के बराबर के रोजगार की गारंटी दी जाती है, जब खेती का काम नहीं होता तथा उन्हें रोजगार की जरूरत होती है।

इस योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में शारीरिक रूप से समर्थ और काम की आवश्यकता वाले उन बालिगों को रोजगार दिलाना है जिन्हें खेती का काम न होने पर खेतों या सहायक धंधों में या सामान्य योजना/गैर योजना निर्माण कार्यों में रोजगार नहीं मिल पाता है। इसका एक उद्देश्य निरंतर रोजगार और विकास के लिए आर्थिक बुनियादी सुविधाओं और सामुदायिक परिसंपत्तियों का निर्माण करना भी है।

सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत देश के विभिन्न राज्यों में अब तक 35 लाख से ज्यादा व्यक्तियों को पंजीकृत किया जा चुका है। सबसे अधिक व्यक्ति उड़ीसा में पंजीकृत किए गए। उनकी संख्या 7,14,152 है। इसके बाद आंध्र प्रदेश (6,45,221), मध्य प्रदेश (5,37,000) और कर्नाटक (5,03,900) का स्थान है।

योजना के तहत केन्द्र सरकार और राज्यों के हिस्से के रूप में 23 राज्यों और 4 केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए अब तक कुल 547.32 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई है। इस योजना का खर्च केन्द्र और राज्य 80:20 के आधार पर उठाते हैं और यह राशि जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को सीधे ही दी जाती है।

हमारे देश में विकास के महाप्रयाण में जब तक महिलाओं की समुचित प्रगति नहीं होगी, सही मायने में विकास अपना अर्थ नहीं पा सकेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतर महिलाएं अब भी गरीबी, निरक्षरता तथा आर्थिक गुलामी की जंजीरों से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाई हैं, इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रधानमंत्री ने महिला समृद्धि योजना कार्यक्रम की घोषणा की। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी बनाना तथा उनमें मितव्ययिता की आदत डालना है। प्रधानमंत्री की घोषणा के अनुसार किसी महिला द्वारा डाकघर में तीन सौ रुपये जमा करने पर सरकार वर्ष में जमा राशि के 25 प्रतिशत के बराबर (75 रुपये) की रकम उनके खाते में जमा कर देगी। इस प्रकार उनके खाते की रकम में लगातार वृद्धि होती रहेगी। हर वयस्क ग्रामीण महिला इस योजना का लाभ उठा सकती है। इस जमा रकम में से जरूरत पड़ने पर महिला द्वारा साल में दो बार रकम निकाली भी जा सकती है। अभी तक 5.38 लाख से अधिक महिलाएं इस योजना का लाभ उठा चुकी हैं। इस योजना के अंतर्गत अब तक 7.47 करोड़ रुपये जमा हो चुके हैं। यह योजना ग्रामीण महिलाओं में बहुत लोकप्रिय हुई है। स्वयंसेवी संस्थाएं भी इस योजना में सरकार का सहयोग कर रही हैं। आशा है यह योजना बड़ी तेजी से और ज्यादा लोकप्रिय होगी।

महिलाओं के हितों को ध्यान में रखते हुए 1992 से ही देश के 50 जिलों में ग्रामीण महिला और बाल विकास कार्यक्रम, डवाकरा चलाया जा रहा है। इस समय यह कार्यक्रम देश के 355 जिलों में चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य गांवों की गरीब महिलाओं की आमदनी के स्तर को बढ़ाना है। इस के अंतर्गत महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, शिशुओं की देखभाल, पोषाहार और स्वच्छ पेयजल आदि के कार्यक्रम शामिल हैं। इस उद्देश्य के लिये महिलाओं के 67 हजार से अधिक समूह बनाये गये हैं। 1993-94 में 11,762 महिला समूह बनाये गये थे जिन

से 2,13,855 महिलाओं को लाभ पहुंचा। आठवीं योजना के अंत तक इस कार्यक्रम को समूचे देश में लागू कर दिया जायेगा। 1994-95 के लिये इस कार्यक्रम के लिए 21 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है।

ग्रामीण इलाकों में लोगों को मकान उपलब्ध कराने के उद्देश्य से 1985 में इंदिरा आवास योजना शुरू की गयी थी, इसका मुख्य उद्देश्य अत्यंत गरीब लोगों को मुफ्त रिहायशी मकान उपलब्ध कराना था। इस कार्यक्रम में गांवों के अनुसूचित जातियों जन जातियों और बंधुआ मजदूरों को शामिल किया जाता है। इस योजना को अब जवाहर रोजगार योजना की उप योजना का रूप दिया गया है। ऐसे मकानों का आवंटन प्रायः लाभार्थी परिवार की महिला के नाम पर किया जाता है। इस में पति पत्नी दोनों का संयुक्त नाम रहता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में 1993-94 से आवास की एक नयी योजना शुरू की गयी है। इस के अंतर्गत मकान बनाने के लिये जमीन उपलब्ध कराना, मकान के शेल्टरों का सुधार और नये मकानों का निर्माण शामिल है। मकानों के सुधार और मरम्मत आदि के किये छह हजार रुपये और निर्माण के लिये 12 हजार रुपये तक की सहायता दी जाती है। केन्द्र सरकार ने 1993-94 में इस के लिये 11 करोड़ रुपये दिये। आठवीं योजना में इस कार्यक्रम के लिये 350 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान है।

हमारे देश में समन्वित ग्रामीण विकास योजना 1970 के दशक से ही चलायी जा रही है। पहले यह कार्यक्रम 2,300 प्रखंडों में शुरू किया गया था, लेकिन 2 अक्तूबर 1980 से इस कार्यक्रम को समूचे देश में लागू कर दिया गया है। इस कार्यक्रम का सबसे प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की गरीबी दूर करके तथा उन्हें रोजगार आदि उपलब्ध करा कर उनका समग्र विकास करना है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत अब तक लगभग 422 लाख परिवारों की सहायता उपलब्ध कराई जा चुकी है और इस कार्यक्रम पर 18,728.3 करोड़ रुपये खर्च किये जा चुके हैं। पिछले तीन वर्षों के दौरान इस पर 2459.25 करोड़ रुपये का खर्च आया। आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 6650 करोड़ रुपये समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम पर खर्च करने का निश्चय किया गया है। इस से 1.26 करोड़ परिवारों को लाभ पहुंचाने का संकल्प व्यक्त किया गया है। इस कार्यक्रम का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों के सभी गरीब परिवारों को पहुंचाने का प्रयास किया जा रहा है।

ग्रामीण युवकों को अपना खुद का रोजगार शुरू करने के लिये प्रशिक्षित करने का एक कार्यक्रम 'ट्राइसेम' शुरू किया गया है। इस कार्यक्रम के जरिये ग्रामीण क्षेत्रों के युवाओं को हुनर सिखाया जाता है। यो तो यह कार्यक्रम अगस्त 1970 से ही चलाया जा रहा है। लेकिन हाल में इस कार्यक्रम पर विशेष जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण के लिये दो सौ रुपये से पांच सौ रुपये मासिक भत्ता दिया जाता है जिससे युवा आई. टी. आई., पोलिटैक्नीक या अन्य संस्थाओं में अध्ययन तथा प्रशिक्षण प्राप्त कर के अपने पैरों पर खड़े हो सके। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रायः 18 से 35 वर्ष आयु के युवकों को शामिल किया जाता है। इसमें विधवाओं, बंधुआ मजदूरों और रिहा किये गये अपराधियों आदि को प्रशिक्षण दिया जाता है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत अब तक 30 लाख ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण दिया जा चुका है। आठवीं योजना अवधि के दौरान 19 लाख ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य रखा गया है।

हमारे देश में कई ऐसे क्षेत्र हैं, जहां सूखे के कारण उनका समुचित विकास नहीं हो पाता है। इन क्षेत्रों में फसलों के उत्पादन, भूमि और पानी आदि पर सूखे के असर को ध्यान में रखते हुए उनके विकास पर बल दिया गया है। अभी तक तेरह राज्यों के 96 जिलों में लगभग 22.36 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इस कार्यक्रम को लागू किया जा चुका है। इसमें विशेष कर उन वर्गों की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है, जिन क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों और अत्यंत पिछड़े वर्गों के लोगों का निवास हो। इन इलाकों में जल संसाधन विकास के लिये 8.94 लाख हेक्टेयर जमीन का उपयोग किया जा रहा है। 31 मार्च 1993 तक इस कार्यक्रम पर 1,42,900 लाख रुपये खर्च किये गये। इस कार्यक्रम के अंतर्गत वनारोपण और चरागाह विकास के लिये 16.03 लाख हेक्टेयर भूमि शामिल की गयी। आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिये इस कार्यक्रम पर एक हजार करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान है। मरुभूमि विकास कार्यक्रम के अंतर्गत पांच राज्यों के 21 जिलों के 131 प्रखंडों में लगभग 3.62 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को शामिल किया गया है। इसके अंतर्गत भूमि को समतल बनाने और उस में नमी रोकने की व्यवस्था की जाती है। जल संसाधन विकास के लिये 56,200 हेक्टेयर क्षेत्र को वनारोपण और चरागाह विकास के लिये 2,29,457 हेक्टेयर क्षेत्र को शामिल किया गया है। इस कार्यक्रम पर मार्च 1993 तक 447.66 करोड़ रुपये खर्च किये गये। आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान इस कार्यक्रम पर 500 करोड़ रुपये कार्य करने का प्रावधान रखा गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समस्या तमाम प्रयासों के बावजूद भी गंभीर बनी हुई है

1991-92 में राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन लागू किया गया। इसमें निश्चय किया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में हर व्यक्ति को कम से कम 40 लीटर स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में खारेपन को नियंत्रित करने अधिक लौह तत्व की मात्रा को कम करने, गिनी कृमि के उन्मूलन और जल स्रोतों के उचित उपयोग के कार्यक्रम भी चलाये जा रहे हैं। 1985 से 1993 तक 18.47 करोड़ लोगों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराया गया। इस पर 7963.8 करोड़ रुपये की लागत आयी है। सरकार ने यह निश्चय किया है कि देश में कोई भी ऐसी बस्ती न हो जहां स्वच्छ पेयजल उपलब्ध न हो। इस उद्देश्य के लिये राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण किया गया है और आठवीं योजना में इस कार्यक्रम के लिये 5100 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों का समग्र विकास करने और गरीबी उन्मूलन करने की दिशा में केवल सरकार के प्रयास ही पर्याप्त नहीं होंगे, इसके लिये स्वयंसेवी संगठनों का भी योगदान लिया जाना चाहिये। इस बात को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक कार्य को प्रोत्साहन देने के लिये स्वयंसेवी एजेंसियों के लिये 'कापार्ट' ने 10,891 परियोजनायें स्वीकार की हैं। इन पर 220 करोड़ रुपये खर्च किये जाने का प्रावधान है।

ग्रामीण क्षेत्रों में चलाये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों पर निगरानी रखने के लिये ग्रामीण विकास मंत्रालय ने निगरानी की 'मानिटरिंग' व्यवस्था भी शुरू की है, जो समय-समय पर इन कार्यक्रमों की प्रगति की जांच करके अपनी सूचना सम्बद्ध अधिकारियों को देती रहती है। लेकिन यह महसूस किया गया है कि इन सूचनाओं के आधार पर अभी समुचित कार्रवाई नहीं हो पाई है जो लोगों को समग्र विकास के पर्याप्त लाभ उपलब्ध कराने के लिए नितांत आवश्यक है।

103 एच, सेक्टर-4,
डी. आई. जेड एरिया,
नई दिल्ली-110007

महिला और बाल विकास कार्यक्रम से 11 लाख ग्रामीण महिलाएं लाभान्वित

ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम, डवाकरा के तहत 67 हजार से ज्यादा महिला समूह अब तक बनाए जा चुके हैं और इन समूहों के जरिए देश की 11 लाख से अधिक महिलाओं को आत्मनिर्भरता और आय उत्पादन की गतिविधियों में शामिल किया गया है। इस कार्यक्रम के लिए 1994-95 में 21 करोड़ रुपये का परिव्यय निर्धारित किया गया है।

इस कार्यक्रम में देश के 355 जिले शामिल किए गए हैं। आठवीं योजना के अंत तक देश के बाकी सभी जिलों को इसमें शामिल करने का प्रस्ताव है। उन जिलों को प्राथमिकता दी गई है जहां महिला साक्षरता दर कम और शिशु मृत्यु दर अधिक है ताकि ग्रामीण आबादी के सबसे पिछड़े वर्गों को सबसे पहले लाभ मिल सके।

इस कार्यक्रम की मुख्य भूमिका महिलाओं के ऐसे समूह बनाना है जहां महिलाएं अपनी समस्याओं की चर्चा करती हैं और महिलाओं के साथ भेदभाव को दूर करने के लिए सामूहिक सहायता करती हैं। समूह में महिलाओं की न्यूनतम स्वीकृत संख्या को 15-20 से घटाकर 10-15 कर दिया गया है ताकि आपस में ज्यादा सामंजस्य हो सके।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

भारतीय अर्थ व्यवस्था में पशुपालन का योगदान

डा० रमेश दत्त शर्मा

प्रधान सम्पादक, 'खेती'

कृष्ण-बलराम के पूजक इस देश में गोपालन और कृषि दोनों साथ-साथ चलते रहे हैं। कृष्ण का एक और नाम गोपाल था और बलराम का हलधर। इन पौराणिक महापुरुषों की ऐतिहासिकता असंदिग्ध है, साथ ही उनकी गाथा के प्रतीकार्थ भी अत्यंत गंभीर हैं। महाभारत काल से आज तक भारतीय अर्थ व्यवस्था में जितना महत्व कृषि का है, उतना ही गोपालन का। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। खेती-बाड़ी से पशुओं को चारा मिलता है, तो पशुओं से खेती की पैदावार बढ़ाने और मिट्टी को उपजाऊ बनाये रखने के लिए गोबर की खाद। इसी तरह भारतीय आहार में दूध और दूध से बनी तमाम चीजों—दही, मट्ठा, घी, मक्खन, पनीर, खोया और खोये से बनी तमाम तरह की मिठाइयां निकाल दी जाएं तो जिंदगी कितनी फीकी हो जाए।

देश में दूध की पैदावार बढ़ने के साथ ही दूध से बनने वाली चीजों का उत्पादन भी लगातार बढ़ रहा है। राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड के अध्यक्ष और भारत में श्वेतक्रांति के सूत्रधार डा० वी० कुरियन के अनुसार पिछले 21 वर्षों में दूध की पैदावार 210 लाख टन प्रतिवर्ष से बढ़कर 580 लाख टन तक जा पहुंची है। डेरी उद्योग प्रतिवर्ष पांच प्रतिशत की दर से वृद्धि कर रहा है और अब हर राज्य में दूध जरूरत से ज्यादा उपलब्ध हो रहा है। 1993-94 में दूध से बनी चीजों के निर्यात का लक्ष्य 50 लाख डालर था जो 1994-95 में बढ़ाकर 100 लाख डालर तक कर दिया गया है। मुख्य रूप से पश्चिम एशिया, बांग्ला देश और श्रीलंका को भारत से मक्खन, बालाहार (बेबी फूड) और दूध का पाउडर भेजा जाता है।

भारत से होने वाले कुल निर्यात में पशुधन का योगदान लगातार बढ़ रहा है। यह कुल कृषि निर्यात (88 अरब 83 करोड़ रुपये प्रति वर्ष) का लगभग एक तिहाई (31.6 प्रतिशत) है। सन् 1990-91 में 325 अरब 53 करोड़ रुपये का कुल निर्यात किया गया था जिसमें से कृषि (पशुधन और चमड़े सहित) का निर्यात 27.2 प्रतिशत था।

हमारी पशु-धन सम्पदा अपार है। दुनिया की आधी भैंसें भारत में ही खड़ी पगुराती भी हैं और दूध की नदियां भी बहाती हैं। पिछले साल तो दूध इतना ज्यादा हो गया कि अनबिका पड़े रहने से खराब हो गया और उसे बंबई के पास समुद्र में बहाना पड़ा। विश्व के गोधन का 14 प्रतिशत से अधिक भारत में है। दुनिया की कुल बकरियों का पांचवां हिस्सा बकरियां इसी देश की हरियाली चर रही हैं। ये सभी जानवर ऐसे हैं कि इस देश की कड़ी गर्मी-सर्दी में जैसे-तैसे आधा-पधा खा-पीकर रोगों से लड़ते हुए खासतौर से गरीबों की नैया खे रहे हैं।

गाय और भारतीय अर्थ व्यवस्था

गाय की पूजा हम यों ही नहीं करते रहे। गाय वास्तव में भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ है। गोमाता की धारणा को इसी आधार पर गांधी जी ने प्रबल समर्थन किया था। उन्होंने सन् 1934 में लिखा था, "मेरी समझ से गोरक्षा का विचार मानव इतिहास की सबसे अद्भुत घटना है। यह मनुष्य को उसकी अपनी जातिगत परिधि से परे ले जाता है। मेरे लिए गाय मानव से नीचे के सभी प्राणियों का प्रतिनिधित्व करती है। गाय के माध्यम से मानव इन समस्त प्राणियों से जुड़ जाता है। गाय को इस विशेष स्थान के लिए क्यों चुना गया इसका कारण बिलकुल स्पष्ट है। गाय भारत में मनुष्य की सच्ची साथिन रही है। उसने सिर्फ दूध ही नहीं दिया, बल्कि उसी के कारण खेती सम्भव हुई। इस सीधे-सादे पशु से दया और ममता टपकती है। लाखों-करोड़ों भारतवासी इसी लिए गाय को माता मानते हैं। गाय की रक्षा का अर्थ है, ईश्वर की समस्त मूकसृष्टि की रक्षा।" जर्मन विद्वान एच.वॉन स्टीटेन क्रोन का कहना है कि गाय के रूप में गांधी जी ने ऐसी ग्रामीण प्रौद्योगिकी प्रचारित की जिसका बड़ा व्यापक प्रभाव पड़ा।

एक अन्य जर्मन विद्वान ओडेण्डहाल ने भारतीय गोपालन प्रणाली का गहराई से अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला कि "भारत अपनी गायों को अमरीका और यूरोप के मुकाबले अधिक लाभप्रद ढंग से पालता है। इस नतीजे पर पहुंचने से पहले उन्होंने यह परखा कि आहार के रूप में गाय-बैलों ने कितनी ऊर्जा ग्रहण की और दूध-मक्खन तथा श्रम के रूप में कितनी कैलौरी ऊर्जा पैदा की। इस तरह भारतीय गोपशुओं की दक्षता 17 प्रतिशत पायी गयी। यही आंकड़ा मुख्य रूप से गोमांस के लिये पाली गयी अमरीकी गायों के लिये चार प्रतिशत था।

भारतीय गोपशुओं से अधिक ऊर्जा-दक्षता प्राप्त होने का कारण यह नहीं है कि वे अमरीकी गोपशुओं से अधिक उत्पादक हैं, बल्कि गाय से प्राप्त उत्पादों के अधिकतम और इष्टतम उपयोग ने ही यह सराहनीय स्थिति पैदा की है। औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों में जितनी कैलोरी ऊर्जा खपायी जाती है, उसका अधिकांश बेकार चला जाना आम बात है। जैसे कि अमरीका में गोपशुओं के गोबर को योंही बहा दिया जाता है। उसका कोई उपयोग नहीं होता। वहां, यह बेकार ही नहीं जाता, बल्कि पर्यावरण संबंधी समस्याएं भी पैदा करता है। इसी समस्या से निपटने के लिए तो नीदरलैंड ने पिछले दिनों अपना गोबर भारत को निर्यात करने की पेशकश की थी।

विदेशी गोभक्षक इस गोरक्षक देश में गायों को खुला घूमता देखते हैं, तो बार-बार आंखें मलते हैं। उनके देशों में तो वे सब 'पेट पूजा' की शिकार हो जातीं। अगर अपने देश में गोपूजा की धारणा इतनी बलवती न होती, तो गरीब भूमिहीन ग्रामीण कहां से चारे-दाने की व्यवस्था कर पाते। इसी धारणा के सहारे गरीब आदमी भी निश्चिंत होकर अपनी गाय को छुट्टा छोड़ सकता है। जर्मनी के पशु विशेषज्ञ डा० जुर्गेन लेंश्च 'फोर्ड फाउन्डेशन' की परियोजना के अधीन सन् 1959 में भारत आए और गांवों में रहकर उन्होंने देखा कि गरीबों के गुजारे के लिए 'गोपूजा' का संस्कार वरदान है। उन्होंने सन् 1987 में हैम्बर्ग से एक किताब अंग्रेजी में प्रकाशित की जो 'गोपूजा' के आर्थिक पक्ष का सांगोपाग विश्लेषण करती है। उनका कहना है कि 'गोपूजा' के बहाने से भारतीय समाज ने सबसे गरीब आदमी के लिए जीने का सहारा ही नहीं उसके सुपोषण का भी प्रबंध कर दिया है।

डा० लेंश्च लिखते हैं, "गो-पूजा के प्रचलन के कारण जो गाय-बैल कसाईखाने जाने से बचे रहते हैं, अंत में तो उनका भी उपयोग होना ही है। लेकिन यह दूसरी तरह से होता है। भारत में तथाकथित पिछड़ी जातियों को यह अधिकार है कि वे मरे हुए जानवर का चमड़ा उतारकर उसका गोश्त खा सकते हैं। हर साल दो करोड़ से ढाई करोड़ गाय-बैल मरते हैं। उनका मांस इस वर्ग के लोगों को मुफ्त में मिलता है। इस तरह उनके पोषण के लिए दुर्लभ 'पशु-प्रोटीन' बड़ी आसानी से सुलभ हो जाता है, क्योंकि इनमें से ज्यादातर परिवार इतने गरीब होते हैं कि वे दूध खरीदने की तो सोच ही नहीं सकते। इस तरह भारतीय समाज में सबसे गरीब तबके को भी बेहतर प्रोटीन आहार मिल जाता है। ब्राजील में इतने गरीब लोग मांसाहार की बात सोच भी नहीं सकते, क्योंकि वहां बड़ा भारी गोश्त उद्योग है और गरीब आदमी गोश्त खरीदने में असमर्थ है।"

मांस-उद्योग बनाम डेरी-उद्योग

भारत में प्रतिवर्ष लगभग 12 लाख टन गोश्त पैदा किया जाता है। इनमें से आधे से ज्यादा भेड़ों और बकरियों का गोश्त होता है। एक चौथाई के करीब गाय भैंस का गोश्त बिकता है और एक चौथाई ही सूअर और मुर्गों का। जितना गोश्त पैदा होता हैं, उसके आधे के करीब विदेशों को भेजकर 140 करोड़ रुपये के बराबर विदेशी मुद्रा हर साल कमाई जाती है। दुनिया में उपलब्ध कुल गोश्त का मात्र एक प्रतिशत ही भारत में पैदा होता है।

अंतर्राष्ट्रीय मांस बाजार में भारतीय मांस की कोई अच्छी कीमत नहीं मिलती। यह औसतन 900 डालर प्रति टन बिकता है, जो बहुत कम है। कसाईखानों की बदतर हालत ही इसके लिए जिम्मेदार है। मुर्गीपालन बढ़ने से मुर्गे का मांस ज्यादा पैदा हो रहा है। सन् 1980 में ब्रायलर यानी मांस के लिये मुर्गियों की संख्या 3 करोड़ थी, जो 1985 में साढ़े सात करोड़ और 1990 में 20 करोड़ प्रतिवर्ष हो गयी। मुर्गी-उद्योग ने हिसाब लगाया है कि आठवीं योजना के अंत तक ब्रायलरों की मांग 45 करोड़ प्रतिवर्ष हो जायेगी।

सूअर का मांस भी 1985 से अब तक की अवधि में करीब दुगना पैदा होने लगा है। आजकल हर साल 88 हजार टन सूअर का मांस पैदा होता है। भेड़-बकरी के मांस की कुल मात्रा सबसे ज्यादा है पर बढ़ोतरी दर में कोई खास बदलाव नहीं आया। सन् 1991-92 में भेड़ बकरी का 9,700 टन मांस निर्यात करके 47 करोड़ रुपये के विदेशी मुद्रा अर्जित की गई।

अंडों के उत्पादन में तो क्रांति ही आ गई है। 1951 में हर साल 183.20 करोड़ अंडे पैदा होते थे। 1990-91 में 2100 करोड़ अंडे पैदा हो रहे थे—दस गुने से भी ज्यादा। अंडों के निर्यात की भी अपार संभावनाएं बताई जाती हैं।

लेकिन अब दुनिया के कई देशों में मांसाहार की खपत घटना शुरू हो गई है। बढ़ते हुए हृदय रोग, कैंसर तथा संक्रामक रोगों की जड़ में चिकनाई युक्त मांसाहार का पाया जाना और पोषण की दृष्टि से शाकाहार का उत्तम सिद्ध होना, इसका बहुत बड़ा वैज्ञानिक कारण है। अतः कुदरती तौर पर मरे हुए जानवरों की खाल से चमड़ा उद्योग बढ़ाकर ज्यादा विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती

है। इसी तरह मांस-उद्योग की जगह डेरी-उद्योग को बढ़ाने की जरूरत है।

कुल दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से भारत का डेरी उद्योग विश्व में तीसरे नम्बर पर है। सन् 2000 तक प्रतिवर्ष 760 लाख टन दूध पैदा होने का अनुमान है। इस तरह डेरी निर्यात की अपार संभावनाएं हैं। यहां तक कि रसगुल्ले जैसे परंपरागत उत्पाद भी निर्यात किये जा सकते हैं। करनाल में स्थित राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, एन. डी. आर. आई., परंपरागत डेरी उत्पादों को सुधारने के भी सफल प्रयास करता रहा है। यहां के डेरी प्रौद्योगिकी विभाग ने रसगुल्लों का टिकाऊपन जांचने की तकनीक निकाली है। इस तकनीक से जांचने पर देखा गया कि बीकानेर के रसगुल्ले कलकत्ते के रसगुल्लों के मुकाबले अधिक टिकाऊ होते हैं। बीकानेरी रसगुल्ले 30 डिग्री सेल्सियस पर आठ महीने तक टिकाऊ रहे, जबकि कलकत्ते के रसगुल्ले एक महीने बाद ही खाने लायक नहीं रहे। जब तापमान बढ़ाकर 70 डिग्री सेल्सियस कर दिया गया तो कलकत्ते के रसगुल्ले 2 दिन बाद ही खराब हो गये, जबकि बीकानेरी रसगुल्ले 6 दिन तक खाने लायक बने रहे। राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान ने भी बेहतर रसगुल्ले बनाने की तकनीक विकसित की है और रसगुल्ले बनाने का पाउडर भी तैयार किया है। एन डी आर आई के रसगुल्ले 30 डिग्री सेल्सियस पर तीन महीने, 50 डिग्री पर तीन हफ्ते और 70 डिग्री सेल्सियस पर छह दिन तक टिकाऊ रहे।

बीकानेरी रसगुल्लों के अधिक टिकाऊपन का भेद यह है कि उन्हें बनाने में रीठा और हाइड्रो यानी सोडियम हाइड्रोजन सल्फाइट का उपयोग किया जाता है। एन. डी. आर. आई. ने रसगुल्ला बनाने के पाउडर में और भी सुधार किया है। अब यह रसुगल्ला पाउडर 30 डिग्री सेल्सियस पर चार महीने तक टिकाऊ रहता है।

इसी संस्थान ने एक ऐसा लस्सी पाउडर तैयार किया है, जो पोलीथीन के पैक में 30 से 32 डिग्री सेल्सियस पर 30 दिन तक और फ्रिज में 8 डिग्री सेल्सियस पर 45 दिम तक टिकाऊ रहता है। अल्युमीनियम युक्त पोलीपैक में 8 डिग्री सेल्सियस पर यह लस्सी पाउडर 80 दिन तक टिकाऊ रहता है। इसी तरह मैंगोशेक पाउडर भी बनाया गया है। मैंगोशेक पाउडर फ्रिज में 8 डिग्री सेल्सियस पर पोलीथीन पैक में 30 दिन तक ताजा रहता है, और अल्युमीनियम पैक में 45 दिन तक। एन डी आर आई की लस्सी, मैंगो लस्सी और मैंगोशेक पाउडर पौष्टिक होने के कारण विदेशों में लोकप्रिय हो सकते हैं।

प्रयोगशाला से फैक्टरियों तक

आप सोच रहे होंगे कि आखिर ये लस्सी, मैंगो-लस्सी और मैंगोशेक पाउडर बाजार में कब आयेंगे। विडम्बना ही है कि अभी तक हमारी प्रयोगशालाओं में तैयार 80 प्रतिशत के करीब तकनीकें वही पड़ी सड़ती रहती हैं। स्वदेशी तकनीकें प्रचलित हो गईं तो विदेशी तकनीकों के साथ जुड़ी विदेश-यात्राओं और भाई-भतीजों को ऊंचे वेतन के लालच से वंचित होना पड़ेगा। भला हो उदारीकरण, विश्वीकरण और व्यवसायीकरण के दौर का जिसके चलते अब वैज्ञानिक संस्थानों को यह अक्ल आ गई है कि वे अपनी तकनीकों से खुद ही कमाई करें। हमारे वैज्ञानिक संस्थान और विश्वविद्यालय चाहें तो अपनी खोजी गई तकनीकों से अपना खर्चा भी निकाल लें और सभी कर्मचारियों को बोनस भी बांट सकें।

डेरी-उद्योग के क्षेत्र में ऐसी ही स्वागत योग्य पहल गुजरात कृषि विश्वविद्यालय और करनाल का राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान कर रहा है।

गुजरात कृषि विश्वविद्यालय के डेरी साइंस कालेज में 15 करोड़ रुपये की लागत से पनीर, आइसक्रीम और दूध पाउडर बनाने का संयंत्र लगाया जा रहा है। करनाल के राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान में लगाये जा रहे डेरी उत्पाद-संयंत्र पर 10 करोड़ रुपया खर्च होगा। इन संयंत्रों में हर रोज 60 से 75 हजार लीटर दूध से पनीर वग़ैरह बनाया जायेगा। यह पक्का पनीर यानी 'चीज़' होगा, जिसके निर्यात की प्रबल संभावनाएं हैं। इस व्यापारिक परियोजना में राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड मदद कर रहा है।

इस समय देश में दूध की खपत पर निगाह डालें तो पता चलता है कि कुल दूध का 45 प्रतिशत तो तरल दूध के रूप में इस्तेमाल होता है और बाकी से तमाम चीजें बनाई जाती हैं। तरल दूध के मुकाबले ये चीजें 10 से 25 गुने ज्यादा दामों पर बिकती हैं। सबसे ज्यादा बनता है घी, फिर दही, फिर मक्खन, फिर खोया, फिर मिल्क पाउडर, फिर पनीर और चीज तथा आइसक्रीम क्रीम और अन्य पदार्थ।

संगठित क्षेत्र में कुल दूध का 10-12 प्रतिशत ही उपयोग में लाया जा रहा है, जिससे हर साल पशुपालकों को करीब 2500 करोड़ रुपये मिल जाते हैं। दूध बेचकर शहरी उपभोक्ताओं से हर साल 4000 करोड़ रुपये की कमाई होती है। अभी डेरी-उत्पादों

का निर्यात केवल तीन करोड़ रुपये के बराबर है। ये उत्पाद ज्यादातर बहरीन और खाड़ी के अन्य देशों को जा रहे हैं।

भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के वर्तमान निदेशक डा. दया सिंह बालेन का सुझाव है कि पूरे देश में डेरी फार्मों की शृंखला बनाई जाए जहां अधिक दूध देने वाली संकर गाय और उत्तम नस्ल की भैंसें रखी जाएं। दूध को ठंडा करने का और ठंडी हालत में परिवहन का प्रबंध हो तो डेरी-उत्पादों के निर्यात में काफी बढ़ोतरी की जा सकती है।

खालों और चमड़े तथा उनसे बनी वस्तुओं का निर्यात बराबर बढ़ रहा है। सन् 1990 में खालों के निर्यात से 70 करोड़ 60 लाख और चमड़े तथा चमड़े की चीजों के निर्यात से 95 करोड़ 10 लाख रुपये की विदेशी मुद्रा कमाई गई यानी कुल मिलाकर 165 करोड़ 70 लाख रुपये की विदेशी मुद्रा कमाई गई। यहां भी अपार संभावनाएं है क्वालिटी बढ़ाकर ज्यादा कमाने की। आजकल देशी और विदेशी जूतों की बाढ़ आयी हुई है। मंहगे और बेशकीमती जूतों की जिनकी हमें कतई जरूरत नहीं है। अगर हम चाहें तो हिन्दुस्तानी जूतों को दुनिया का सिरमोर बना सकते हैं। हमारा इशारा देशी चमरौधे की ओर नहीं है, बल्कि कम्प्यूटर की मदद से डिजाइन किए गए उन 70 किस्म के जूतों और सैडिलों की तरफ है, जो पश्चिमी देशों में चरणों की शोभा बढ़ायेंगे। मद्रास के केन्द्रीय चमड़ा अनुसंधान संस्थान ने भारत के जूता उद्योग को 70 तरह की नायाब कम्प्यूटरी डिजाइनें देकर दुनिया के जूता उद्योग पर छा जाने का रास्ता खोला है। इस तरह पशुपालन का भारतीय अर्थ व्यवस्था में गहरा योगदान है। इसमें ऊन उद्योगों को जोड़ लें, गोबर का हिसाब लगायें और हल चलाने से लेकर बैलगाड़ी और बोझा ढोने के आंकड़े जोड़ें तो पता चलेगा की हमारी ग्रामीण संस्कृति और ग्रामोद्योग पर आधारित अर्थ व्यवस्था का जुआ पशुपालन के कंधों पर ही टिका है। बाकी दुनिया में भी हमारी सुधरी नस्ल की गाय और भैंसें बड़े पुराने जमाने से जानी जाती हैं। अब तो हम दुनिया की नस्ल सुधारने के लिए सांडों का वीर्य भी निर्यात कर सकते हैं। हिसाब लगाया गया है कि 100 उन्नत नस्ल के भैंसे पालने पर पांच लाख प्रति भैंसे के हिसाब से पांच करोड़ रुपये खर्च करके प्रति वर्ष 20 करोड़ रुपये के बराबर विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भैंसे के वीर्य की एक खुराक करीब एक सौ रुपये की बिकती है और एक सौ भैंसे हर साल 20 हजार खुराक पैदा कर सकते हैं।

यह सब तभी हो सकता है जब हम एक-दूसरे की टांग खींचने का राष्ट्रीय उद्योग भुलाकर मिलजुलकर साथ-साथ बढ़ने का रास्ता अपनायें।

457, हवा सिंह, ब्लाक,
खेल गांव, नई दिल्ली-110049

सुन्दर अपने गांव हों

✍ मोहन चन्द्र मंटन

न हो गंदगी, साफ हवा हो,
निर्मल जल हो यही दवा हो
जीने को क्या और चाहिए
स्वस्थ सुखी जीवन बितायें
आपस में संबंध बने हों
झगड़ों में कोई न तने हों
पेड़ों की शीतल छाओं में
थके पथिक के लिए ठांव हो
सुन्दर अपने गांव हों

फल-फूलों से भरे पेड़ हों
हरी-भरी खेत की मेड़ हो
खेती के उन्नत साधन हों
मेहनत से पा सकते धन हों

न हो किसी को कही रुकावट
शोषण की हो कहीं न आहट
हो खुशहाल किसान हमारे
दुख दर्दी के रहें न मारे
गांव-गांव गोकुल बन जाए
वंशी सुख चैन की बजाए
नंद गांव वृन्दावन भाए
ग्वाल बाल ले धेनु चराएं
संवरे अपने घर आंगन हों
त्यौहारों के मंगल क्षण हों
आपस में सदभाव हो,
सुन्दर अपने गांव हों

ई-216, टाइप-1 क्वार्टर्स,
मोतीबाग-1 नई दिल्ली-1100021

ग्रामीण विकास में पशुपालन

डा (कु०) पुष्पा अग्रवाल

भारत की आत्मा गांवों में बसती है। ये गांव ही इस देश की अर्थ व्यवस्था का मेरुदंड हैं। किंतु इनमें रहने वाला अधिकांश जनसमुदाय बेरोजगार, निर्धन, शोषित और अशिक्षित है। यद्यपि ग्रामवासियों को गरीबी की सीमा-रेखा से ऊपर उठाने के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं तथापि अभी तक अपेक्षित सफलता नहीं मिल पाई है। औद्योगिक और कृषि क्षेत्र में त्वरित गति से विकास होने पर भी बढ़ती हुई अतिरिक्त ग्रामीण जनसंख्या को न तो संगठित औद्योगिक क्षेत्रों में रोजगार दिलाया जा सका है और न ही हरित क्रान्ति द्वारा सब के लिए रोजगार जुटाए जा सके हैं। जिन महीनों में खेतों में काम नहीं होता अधिकांश जनसमुदाय बेकार रहता है तथा आर्थिक विषमताओं का शिकार बनता है। अतः कुछ ऐसे काम-धन्धों की आवश्यकता है जो खेती के साथ-साथ किए जा सकें और जिसमें पूरा परिवार संलग्न हो सके।

इस दृष्टि से पशुपालन का कार्य अपना विशेष महत्व रखता है। यदि कृषि हमारे देश की रीढ़ है तो पशुपालन कृषि की रीढ़ है। खेती-बाड़ी में पशु-शक्ति का भारी योगदान है। अपने दूध, ऊन, फर, खाल, मांस और गोबर के आर्थिक उपयोग के कारण पशु बहु-उपयोगी हैं। आर्थिक और सामाजिक महत्व के कारण हमारी जीवन प्रणाली से इनका अटूट रिश्ता है। इसी आधार पर ये हमारी धार्मिक मान्यताओं से जुड़े हैं। नंदी (बैल) कल्याणकारी शिव का वाहन है तो गाय को भारतीय संस्कृति में मां का स्थान प्राप्त है। सम्भवतया श्रीकृष्ण द्वारा गोवर्धन की पूजा कराने के पीछे भी परोक्ष रूप में यही उद्देश्य था। वास्तव में किसान का परिवार बिना पशु के पूरा ही नहीं होता।

ग्रामों में पाले जाने वाले पशुओं में दुधारू, बोझा ढोने वाले, खेतों पर काम करने वाले तथा यातायात के काम आने वाले पशु आते हैं। दुधारू पशुओं में गाय, भैंस और बकरी, बोझा ढोने वाले, यातायात के काम व खेतों पर काम करने वाले पशुओं में गधा, ऊंट, घोड़ा और खच्चर को लिया जा सकता है। इनके अतिरिक्त सूअर, खरगोश और भेड़ों का पालन भी मांस और ऊन की दृष्टि से किया जाता है। विगत तीन दशकों में इन पशुओं की संख्या में 8.5 करोड़ की वृद्धि हुई है। दूध-उत्पादक पशुओं की संख्या में औसतन 25 प्रतिशत की तथा भेड़/बकरी की संख्या में 60 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। विश्व भर की भैंसों की कुल संख्या में से लगभग आधी भैंसें इसी देश में हैं। किन्तु जहां दुधारू पशुओं की संख्या में वृद्धि हुई है वहां माल ढोने वाले पशुओं जैसे घोड़ा, गधा, खच्चर और ऊंट की संख्या में गिरावट आई है। राष्ट्रीय उत्पाद में पशुओं का योगदान 27 हजार करोड़ रुपये आंका गया है। वर्ष 1950 की तुलना में आज दूध की मात्रा चार गुनी हो गयी है और ऊन का उत्पादन दुगुना हो गया है।

जहां तक दुधारू पशुओं का सम्बन्ध है उनके दूध से अनेक उत्पाद तैयार होते हैं जैसे दूध, दही, पनीर, खोया, मक्खन, घी आदि। घर में प्रयुक्त करने के अतिरिक्त प्रत्येक पशुपालक परिवार दूध और उसके उत्पादों का व्यवसाय कर सकता है, जो आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद है। यदि एक बेरोजगार व्यक्ति पांच अच्छे दुधारू पशु पाल ले तो उसके परिवार का निर्वाह सुविधापूर्वक हो सकता है। विभिन्न राज्यों में विशेष रूप से सीमांत और छोटे किसानों को खेती के साथ-साथ दूध का धंधा अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश, गुजरात और मध्य प्रदेश में शासन की ओर से श्वेत क्रांति लाने का प्रयास किया जा रहा है। दुग्धशाला विकास कार्यक्रम जहां एक ओर ग्रामीण निर्बल वर्ग को आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाता है वहां दूसरी ओर नगरवासी उपभोक्ताओं को स्वच्छ दूध और दूध से बने पदार्थ उपलब्ध कराता है। वर्ष 1917 में कटरा सहकारी दुग्ध समिति, इलाहाबाद की स्थापना से दुग्ध व्यवसाय का सहकारिता के क्षेत्र में प्रवेश हुआ। तत्पश्चात् तो अनेकों छोटी-बड़ी दुग्ध सहकारी समितियों और डेरियों की स्थापना हुई। आज अमूल डेरी के नाम से कौन परिचित नहीं है। मध्य प्रदेश में भी पशुपालकों की कठिनाइयों को दृष्टिगत रखते हुए अनेक योजनाबद्ध कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं। पशु धन के परिरक्षण, संरक्षण, अभिवृद्धि, समुन्नत प्रजनन और चारा विकास के लिए जैविक संस्थाएं व अनुसंधान संस्थान कार्यरत हैं। इसके अलावा उत्पादों के वितरण और मूल्य नियंत्रण संबंधी कार्य पूरी सजगता और सक्रियता से किए जा रहे हैं। इसके साथ ही पशु चिकित्सा, चिकित्सा अनुसंधान, औषधि निर्माण आदि को भी महत्व दिया जा रहा है।

दूध के अतिरिक्त पशुओं के गोबर के रूप में प्राप्त होने वाली खाद मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है। इससे गोबर गैस प्राप्त करके

खाना पकाने के ईंधन और घर में प्रकाश की व्यवस्था के लिए प्रयुक्त होने वाले तेल में बचत की जा सकती है। खादी ग्राम उद्योग और सरकार भी गोबर गैस संयंत्र लगाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है। पशुओं के सींग खुर तथा हड्डियां भी खाद के रूप में प्रयोग किए जा सकती हैं। देश को दोनों प्रकार की खाद से लगभग 270 करोड़ रुपये वार्षिक की सामग्री प्राप्त होती है तथा इससे रासायनिक खाद के आयात करने में होने वाली विदेशी मुद्रा की भी बचत होती है।

इतना ही नहीं, पशुओं से प्राप्त होने वाला चमड़ा ही चमड़ा उद्योग का आधार है। इससे जूते, बैग, पर्स तथा इसी प्रकार की अन्य चीजें बनती हैं। चमड़े की सफाई, धुलाई, रंगाई अनेक लोगों को रोजगार देती है। इनका मांस खाद्य पदार्थों के रूप में प्रयुक्त होता है। खेतों में हल चलाने के अतिरिक्त बीज आदि खेतों तक ले जाने और कटाई के उपरांत फसल को भंडारण अथवा विक्रय स्थान तक ले जाने में पशुओं का महत्वपूर्ण योगदान है।

दुधारू पशुओं के अतिरिक्त घोड़े, गधे, ऊंट जहां माल ढोने के काम आते हैं वहां यातायात संबंधी सुविधा भी प्रदान करते हैं। घर में पाला गया प्रत्येक पशु आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद है। आज भी लगभग तीन लाख गांव यातायात के आधुनिक साधनों से दूर हैं। बंगलौर के इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट के अनुसार भारत में 1.5 करोड़ के लगभग बैलगाड़ियां हैं जिनमें 4000 करोड़ रुपये की पूंजी लगी है। इसी इंस्टीट्यूट के अनुसार जितना माल पशुओं और पशु गाड़ियों द्वारा ढोया जाता है उतना हमारी रेल व्यवस्था द्वारा नहीं ढोया जाता। यह सम्भावना की जाती है कि कम से कम अगले 50 वर्षो तक तो यातायात में पशुधन का प्रयोग होगा ही।

इन दुधारू और मालढोवक पशुओं के अतिरिक्त भेड़, बकरी, सूअर, खरगोश पालन भी ग्रामीण गरीबी को दूर करने और रोजगार जुटाने में सहायक हैं। भेड़ों और खरगोशों की ऊन की धुलाई, रंगाई और कताई ऊन उद्योग का मूल आधार है। खरगोश की ऊन बाजार में बहुत महंगी बिकती है।

भेड़ पालन व्यवसाय में राजस्थान का अपना विशेष स्थान है। विशेषतया राजस्थान में भेड़ पालन जीविका उपार्जन का प्रधान साधन है। इस राज्य में लगभग डेढ़ करोड़ भेड़ें हैं। उनसे प्राप्त ऊन, खाल और मांस से लाखों रुपये वार्षिक की आय होती है। यद्यपि राज्य के सभी जिलों में भेड़ पालन व्यवसाय को अपनाया गया है तथापि भीलवाड़ा में इस दिशा में विशेष प्रगति हुई है। यहा अनुमानतया 12 लाख भेड़ें हैं। अनेकों किसान इन्हें पाल कर विभिन्न संबंधित व्यवसायों से जुड़ गए हैं। भेड़पालकों को नवीनतम वैज्ञानिक तकनीक की जानकारी देने, भेड़ों के लिए चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध कराने, भेड़ों से प्राप्त ऊन की किस्म सुधारने, मृत्यु दर घटाने और संख्या बढ़ाने आदि के संबंध में ऊन विभाग द्वारा विभिन्न कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

राज्य में पंचायत समिति स्तर पर सात कृत्रिम गर्भाधान प्रसार केन्द्र, छः भेड़ और ऊन प्रसार केन्द्र तथा ग्रामीण स्तर पर भेड़ और ऊन प्रसार उप-केन्द्र भी चलाए जा रहे हैं। प्रत्येक प्रसार केन्द्र पर एक-एक प्रसार अधिकारी और दो से आठ तक स्कन्ध सहायक होते हैं। ये भेड़पालकों से लगातार सम्पर्क बनाए रखते हैं और वैज्ञानिक दृष्टि से भेड़ पालन संबंधी परामर्श देने के साथ ही उनकी कठिनाइयों का भी समाधान करते हैं।

जहां देसी भेड़ों से पौन किलो से लेकर सवा किलो तक ऊन प्राप्त होता है वहां संकर किस्म से दो से ढाई किलो तक ऊन मिलता है। सोनाड़ी और मालपुरा भेड़ों से संकर प्रजनन द्वारा कालीन के लिए ऊन प्राप्त किया जा सकता है। संकर प्रजनन के लिए उपयुक्त नस्ल के मेढ़े रियायती दरों पर उपलब्ध कराए जाते हैं। रेवड़ में इन मेढ़ों को रखने से पैदा होने वाले एक चौथाई पशु विदेशी रक्त वाले होते हैं जिनमें संक्रामक रोगों का प्रभाव भी कम होता है और ऊन भी अधिक मात्रा में मिलती है। नाली जाति के मेमनों से विकसित भेड़ों से कालीन और वस्त्रों के लिए उपयोगी ऊन और अधिक मांस की प्राप्ति होती है। भेड़ों को संक्रामक रोगों से बचाने के लिए विभाग की ओर से टीके लगाए जाते हैं तथा परजीवियों और कीटाणुओं से बचाव के लिए कृमिनाशक दवा पिलाई जाती है और दवा का छिड़काव किया जाता है।

भारत सरकार पशु पालन को व्यावहारिक और वैज्ञानिक रूप देने के लिए कृतसंकल्प है जिससे देश में पशुधन की वृद्धि हो सके और इससे प्राप्त होने वाले लाभ में वृद्धि हो सके। इसके लिए पशुओं का संकर प्रजनन अधिक उपयोगी है जिससे अधिक दूध और मांस की प्राप्ति हो सके। गाय संकर प्रजनन परियोजना में कर्ण विस तथा कर्ण फीजी नस्ली गायों ने दूध उत्पादन में उल्लेखनीय कीर्तिमान स्थापित किए हैं। इन नस्लों की गायों ने 3200-3700 लीटर दूध एक दूध काल में दिया है।

बकरी गरीब की गाय है। बकरी की उत्तम नस्लें एल्पाइन और सानेन हैं। बीकानेरी नस्ल की बकरी साधारण गाय की अपेक्षा अधिक दूध देती है। इसके अतिरिक्त दुधारू पशुओं में भैंस का अपना विशिष्ट स्थान है। वर्ष 1977 से फर, ऊन, मांस और खाल की उपयोगिता के कारण खरगोश की नस्ल के सुधार पर भी ध्यान

दिया जा रहा है। सूअर पालन के काम को यार्क शायर सूअर की नस्ल ने बहुत लाभदायक बना दिया है।

पशुओं की दूध उत्पादन क्षमता को बढ़ाने का सफल नुस्खा संकर प्रजनन पर ध्यान देकर उनकी नस्लों में सुधार का कार्य करने वाला भारत संभवतया पहला देश है। आवश्यकता इस बात की है कि कृत्रिम गर्भाधान और संकर प्रजनन के लिए वैज्ञानिक और व्यावहारिक कदम उठाए जाएं। आण्विक अनुवांशिकी स्रोत संरक्षण और भ्रूण प्रौद्योगिकी जैसे आधुनिक क्षेत्रों में हमारा देश किसी विकसित देश से पीछे नहीं है। इन कार्यक्रमों में विदेशी नस्ल से फायदा उठाने के साथ ही देसी नस्ल की गुणवत्ता भी सतत बनाए रखनी आवश्यक है। भारत में संकर प्रजनन की सुविधा 261 कृत्रिम गर्भाधान और उप गर्भाधान केन्द्रों पर उपलब्ध है। इन केन्द्रों पर देसी गाय या भैंसों को विदेशी या सक्षम पशुओं के वीर्य से गर्भित कराया जाता हैं। हार्लिस्टी जर्सीसर फीजियन सांडों के वीर्य से गायों का संकर प्रजनन कराया जाता है जिससे दूध के उत्पादन में कई गुणा वृद्धि हो जाती है।

संकर प्रजनन की सुविधा के विस्तार को अति हिमीकृत वीर्य एवं भ्रूणांतर तकनीक ने और भी सरल बना दिया है। आज परख नली गाय-भैंस को जन्म देने में सफलता मिल चुकी है।

हिमीकृत वीर्य को अधिक समय तक सुरक्षित एवं व्यवहार योग्य बनाए रखा जा सकता है। सुदूर स्थानों पर भेजा जा सकता है। किसान को जनन द्रव्य घर बैठे मिल सके इसके लिए योग्य स्वयंसेवियों का प्रशिक्षण की दृष्टि से चुनाव किया जा रहा है। यह योजना भी बनाई जा रही है कि जो किसान अपने पशुओं का कृत्रिम गर्भाधान कराएगा, सरकार की ओर से उसे प्रति पशु 10 रुपये दिए जाएंगे। पशुपालन से अधिक लाभ अर्जन के लिए उपरोक्त के अतिरिक्त पशुओं को संक्रमण रोगों से बचाने की दृष्टि से टीके लगवाना भी आवश्यक है। गलघोंटू, खुरपका, मुंह पका, लंगड़िया, मांकनी, रेबीज जैसी बीमारियों से बचाव के लिए टीके लगवाने चाहिए। जैविक औषधि उत्पादन शाखा, लखनऊ में विभिन्न टीकों का निर्माण किया जाता है।

पशुपालन श्रम प्रधान व्यवसाय है जिसमें एक साथ अधिक पूंजी की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इससे ग्रामीणों को बड़ी संख्या में रोजगार मिलता है और इसमें परिवार का प्रत्येक सदस्य संलग्न हो जाता है। चारा लाना, काटना, पशुओं को चराना, नहलाना, दूध निकालना, बेचना, गोबर पाथना आदि अनेक ऐसे कार्य हैं जो छोटे बड़े सदस्यों को कार्यरत करते हैं। इस प्रकार पशुपालन से जहां आय में वृद्धि होती है वहां जीवन स्तर में भी सुधार आता है। पशु पालन, ग्रामीण समृद्धि और खुशहाली का व्यावहारिक माध्यम है। इसके लिए अधिक मात्रा में दूध, ऊन, मांस देने वाले स्वस्थ पशुओं की आवश्यकता है। इससे सम्बन्धित वैज्ञानिक तकनीक को प्रसार द्वारा घर-घर पहुंचाने की आवश्यकता है। यदि ये प्रयास किताबी या फाइलों के कागज ही बन कर रह गए अथवा योजनाएं फाइलों के अम्बार में गुम हो गईं तो सारा श्रम अर्थहीन हो जाएगा। ग्रामीण विकास की गति को बनाए रखने के लिए और बेरोजगारी के दानव को पनपने से रोकने के लिए वैज्ञानिक जानकारी और योजनाओं के प्रचार और प्रसार की आवश्यकता है।

एन० 25-बी, दूसरी मंजिल,
जंगपुरा एक्सटेंशन, नई दिल्ली

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में "पाठकों के विचार" स्तंभ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार दो सौ शब्दों से अधिक के न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, कमरा न० 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परंतु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तंभ में प्रकाशित होंगे।

—सम्पादक

ग्रामीण विकास के कारगर आयामों में पशुपालन

डा० कृष्ण कुमार सिंह

भारत गांवों का देश है। यहां के ग्रामीण विकास में पशुपालन का अपना एक सार्थक इतिहास है। हिन्दुओं के आदि ग्रन्थों के साथ-सांथ बाइबिल और कुरान में भी पशुओं के प्रति प्यार के भाव का वर्णन मिलता है। कृष्ण की बांसुरी के धुन से गायें भागी आया करती थीं तो बुद्ध के दुलार से भेड़ें। मुनियों के आश्रम में सभी प्रकार के पशु एक दूसरे से वैर भाव त्याग कर आया जाया करते थे।

कृषि प्रधान देश की समृद्धि का आधार पशुपालन है। पशुपालन पर ही डेरी उद्योग आधारित है। डेरी उद्योग ग्रामीण विकास के लिए मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। एक तरफ पशुपालन से दूध, घी, मक्खन, अंडा तथा मांस की प्राप्ति होती है तो दूसरी तरफ बैल, घोड़ा, ऊंट और हाथी से करोड़ों हार्स पावर ऊर्जा की बचत होती है। उदारीकरण की नीति अपनाने के बावजूद लगभग तीन लाख गांव आधुनिक यातायात के साधनों से वंचित है। बंगलौर के इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट के अनुसार हमारे यहां चार करोड़ रुपये की लागत से लगभग डेढ़ करोड़ बैलगाडियां चल रही हैं और जितना माल पशु या पशुगाड़ियों से ढोया जाता है उतना रेल सेवा से भी नहीं ढोया जाता तथा अगले 50 वर्षों तक पशुधन का प्रयोग यातायात के रूप में होते रहने की संभावना है। इतना ही नहीं, ऊन तथा चमड़ा उद्योग के लिए कच्चे माल की प्राप्ति भी पशुपालन पर ही निर्भर है। कृषि विभाग के वैज्ञानिकों ने धान, गेहूं, चना, दलहन, तिलहन और अन्य फसलों के उत्पाद से सम्बद्ध विषय पर शोध कार्य कर हरित क्रांति तो ला दी लेकिन उस अनुपात में मवेशियों के लिए चारे के बीजों तथा उत्तम प्रजनन हेतु शोध नहीं कर सके जिससे श्वेत क्रांति हमारे देश में नहीं आ सकी। जबकि यह स्पष्ट हो चुका है कि श्वेत क्रांति तथा नील क्रांति के अभाव में ग्रामीणों की आय में समुचित वृद्धि नहीं हो सकती। हालांकि पशुधन की संख्या की दृष्टि से विश्व में भारत का प्रथम स्थान है। लेकिन फिर भी राष्ट्रीय आय में पशुधन से मिलने वाली आय का अनुपात लगभग 18 प्रतिशत है जबकि डेनमार्क में 80 प्रतिशत, फ्रांस में 62 प्रतिशत, इंग्लैंड में 75 प्रतिशत, स्वीडन में 76 प्रतिशत तथा अमरीका में 60 प्रतिशत है। अतः अब यह महसूस किया जाने लगा है कि कृषि विकास के साथ-साथ पशुधन के विकास और संरक्षण को भी उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। हमें गाय, भैंस के अतिरिक्त बकरी, सूअर, भेड़, मुर्गी तथा मछली पालन पर भी वैज्ञानिक सोच की आवश्यकता है।

बकरी पालन

सीमांत और लघु कृषकों, कृषक मजदूरों तथा अन्य पिछड़े और कमजोर वर्ग के लोगों की आय में वृद्धि का आधार है बकरी पालन। बकरी को गरीब की गाय कहा जाता है। उत्तम नस्ल की बकरी मात्र 1500 से 2000 रुपयों में मिल जाती है जबकि उत्तम नस्ल की गाय का मूल्य 10,000 से 15,000 रुपये के बीच होता है। साधारणतः 305 दिनों के दूध देने की अवधि में बकरी 400 से 600 कि. ग्राम दूध देती है। इनके रख-रखाव पर मामूली खर्च करना पड़ता है। अतः बकरी पालन ही मात्र जीविकोपार्जन का साधन नहीं माना जाना चाहिए बल्कि इसे एक व्यावसायिक आधार प्रदान करना चाहिए ताकि सबसे निचले वर्ग की आय में वृद्धि हो सके।

भेड़ पालन

भारत में भेड़ पालकों का जीवन खानाबदोश के समान ही है। झुंडों में भेड़ों को चराते जहां शाम हुई वहीं उनका बिस्तर लग जाता है। हमारे यहां भेड़ पालन ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार है। इसी पर ऊन उद्योग निर्भर करता है। राजस्थान की एक भेड़ एक वर्ष में औसतन 14 कि. ग्राम ऊन देती है जो कि अन्य देशों की तुलना में बहुत ही कम है। साथ ही इन भेड़ों की ऊन घटिया किस्म की होती है। अतः इनके नस्ल में सुधार कर ग्रामीण गरीबों की आय में वृद्धि की जा सकती है।

सूअर पालन

सदियों से सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के लिए सूअर पालन पुराना व्यवसाय है। हालांकि लाभ की दृष्टि से यह उत्तम व्यवसाय है फिर भी उच्च जाति के लोग इसे नहीं अपनाना चाहते। एक अनुमान के अनुसार एक साल में 6500 रुपये की आमदनी सूअर पालन से होती है । अच्छे नस्ल के सूअर

पालने से आय में अपार वृद्धि की संभावनाएं हैं। सूअर पालन पर वैज्ञानिक ढंग से सोच कर इसकी नस्ल में सुधार की आवश्यकता है।

मुर्गी पालन

ग्रामीणों की माली हालत में सुधार लाने में मुर्गी-पालन का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अंडों व मांस को पौष्टिक भोज्य पदार्थ के रूप में पसन्द किया जाता है। इसीलिए ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट विकास को प्रोत्साहन देने के लिए ग्रामीण शिक्षित बेरोजगारों को आर्थिक सहायता प्रदान की जा रही है।

मत्स्य पालन

ग्रामीणों के उत्थान के लिए हरित क्रांति, श्वेत क्रांति के साथ-साथ नील क्रांति भी आवश्यक है। नील क्रांति से खाद्य आयात की समस्या के समाधान के साथ-साथ बेरोजगारी की समस्या का समाधान भी होगा। इस समय मछली उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में भारत का आठवां स्थान है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि कृषि युग के बाद जल-जंतु युग ही आएगा। अतः हमें कृषि फार्मों के अतिरिक्त मत्स्य फार्मों की स्थापना भी करनी चाहिए।

आज जिस गति से ग्रामीण क्षेत्रों की आबादी में वृद्धि होती चली जा रही है उस गति से बेकार हाथों को रोजी-रोटी नहीं मिल पाती। परिणामतः गांवों से शहरों की ओर बड़े पैमाने पर पलायन जारी है। नगर, महानगरों में तबदील होते जा रहे हैं। पर उन निरक्षर या कम पढ़े-लिखे बेरोजगारों को नगरों, महानगरों में पलायन से क्या मिला? शोषण, कुपोषण, कुंठा, तनाव, गंदगी, बीमारी, फुटपाथ, आठ घंटों की जगह बीस घंटे के काम के अतिरिक्त कुछ नहीं। जब इनका तन गल जाता है और तब लौट जाते हैं, अपने गांव की ओर ज़हां उन्हें फटे-हाल देख गांव भी रो पड़ता है। इस गंभीर समस्या के समाधान के लिए आजादी के बाद से ही सरकार प्रयास करती रही। अनेक योजनाएं चलाती रही, यथा—समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, विशेष पशुधन परियोजना, विशेष पशुधन ग्रामीण विकास कार्यक्रम, सघन पशुधन विकास कार्यक्रम इत्यादि। इन कार्यक्रमों के तहत 25 प्रतिशत से 33.3 प्रतिशत तक सहायता देकर दुधारू पशु उपलब्ध कराए जाते हैं। फिर भी समस्या का कारगर समाधान नहीं हो पा रहा है। इसलिए आठवीं पंचवर्षीय योजना के तहत यह संकल्प लिया गया कि सन् 2003 तक पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त कर लिया जाएगा। पूर्ण रोजगार के कारगर आयामों में से पशुपालन एक है। ग्रामीण गरीब अपनी गाय, भैंस, बकरी, भेड़, सूअर आदि का पेट भरने के लिए तेज धूप, मुसलाधार वर्षा में भी दर-दर की ठोकरें खाता-फिरता है और लोगों से गाली सुनते, दंडित होते गरीबी के चक्रव्यूह में सदा फंसे रहता है। अब प्रश्न उठ खड़ा होता है कि ये ग्रामीण गरीब पशुपालन करते हुए भी क्यों गरीबी के चक्रव्यूह में फंसे रहते हैं। उत्तर स्पष्ट है। गरीबी के चक्रव्यूह में फंसे होने के कारण ये दुधारू पशुओं को पौष्टिक आहार नहीं दे पाते जिससे पशु से दूध कम मिलता है और फिर एकदम ही दूध मिलना बंद हो जाता है जिससे इनको पर्याप्त आय नहीं होती और गरीब के गरीब ही बने रहते हैं। दुधारू पशुओं का लाभ मध्य वर्ग के लोग ही उठा लेते हैं। जब पशु दूध देना बंद कर देता है तो उसे उन असहाय गरीबों को दो-चार सौ रुपये का लालच देकर रखने-चराने के लिए दे दिया जाता है। फिर जब वह पशु दुधारू हो जाता है तो उसका मालिक उसे ले लेता है। हालांकि समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत गरीबों को दुधारू पशु मुहैया कराया जाता है, लेकिन उसका भी लाभ बिचौलिया उठा लेता है। ग्रामीण युवकों को ट्राइसेम योजना के अंतर्गत कृत्रिम गर्भाधान विधि का प्रशिक्षण तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप उपकरण उपलब्ध कराकर कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा में वृद्धि की जा रही है। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को विकसित करने तथा पशुपालकों को उनके दूध का लाभकारी-मूल्य दिलाने के लिए कुछ योजनाएं चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं के तहत चयनित युवकों को पशुधन और डेरी विकास के लिए आर्थिक सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। इसके बावजूद हमारे यहां श्वेत क्रांति मात्र नारा ही बन कर रह गयी है। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रवेश द्वार पर भी हमें अमरीका और कनाडा से अति हिमकृत वीर्य का आयात करना पड़ रहा है। 25 लीटर से ज्यादा दूध देने वाली गायों के उत्पादन की जरूरत को पूरा करने के लिए 'पवन' जैसे सांडों की संख्या में वृद्धि करनी होगी। यानी नस्ल सुधार, पौष्टिक चारे के प्रबंध के साथ-साथ वैज्ञानिक ढंग से देख-रेख की आवश्यकता है। कृषि के विकास के लिए पूरे देश में 27 विश्वविद्यालय कार्यरत हैं। अतः पशुधन के विकास के लिए भी विश्वविद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए। इस संबंध में ग्रामीण स्तर पर चर्चा होनी चाहिए ताकि ग्रामीणों में उत्साह की भावना पनप सके और गांवों का सर्वांगीण विकास संभव हो सके।

ग्रा. पो. पसौर,
जिला भोजपुर (बिहार)
पिन - 802223

खरगोश पालन : सहायक उद्योग धन्धा

गंगाशरण सैनी

जिस प्रकार मुर्गी पालन, भेड़-पालन, बकरी पालन, मधुमक्खी पालन, सुअर पालन, कोशकीट पालन, मछली पालन, बटेर पालन आदि सहायक उद्योग धन्धे हैं, ठीक उसी प्रकार खरगोश पालन भी एक लाभप्रद सहायक उद्योग धंधा है। खरगोश एक ऐसा पशु है जिसे विभिन्न प्रकार की जलवायु में पाला जा सकता है। खरगोश जंगली और पालतू दोनों ही प्रकार के मिलते हैं। खरगोशों को विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाला जाता है। इनसे ऊन, मांस, खाल प्राप्त की जाती है। इसके अलावा इन्हें प्रयोगशालाओं में प्रयोगात्मक कार्यों और मनोरंजन के लिए भी पाला जाता है। खरगोश कई रंग के होते हैं जिनमें मुख्य सफेद, लाल, काले, भूरे, स्लेटी व चितकबरे रंग के होते हैं। ये देखने में अत्यन्त आकर्षक होते हैं।

खरगोश शाकाहारी पशु है। खरगोश पालन के कार्य में एक विशेष बात यह है कि इसे थोड़ी सी जगह में शुरू किया जा सकता है। इसे रोटी, चना, घास, गाजर, पालक, मेथी, फल आदि खिलाकर पाला जा सकता है। इसे ग्रामीण क्षेत्रों में सहायक उद्योग धंधे के रूप में अपनाकर काफी लाभ उठाया जा सकता है। बेरोजगार युवक इसके पालन से अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं। इनके अलावा छोटे और सीमान्त कृषक, कृषि मजदूर भी इसे सहायक उद्योग धंधे के रूप में अपना सकते हैं। खरगोश पालन की कुछ प्रमुख बातें हैं जिनका ध्यान रखना नितांत आवश्यक है।

उन्नत जातियां ही पाले

खरगोश पालन में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि खरगोश केवल उन्नत जातियों के ही पालें। वैज्ञानिकों ने खरगोश की आठ प्रजातियां और 87 जातियां बताई हैं जो विश्व के विभिन्न देशों में पाई जाती हैं। इनमें ब्रिटिश और एशियन अंगोरा, न्यूजीलैंड व्हाइट, ग्रेजाइंट्स, व्हाइट जाइंटस, साटनडच, सोवियत चिंचिला, ब्लैक ब्राउन आदि प्रमुख जातियां हैं उन्हें विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाला जाता है।

ब्रिटिश और एशियन अंगोरा जाति के खरगोशों को 30 डिग्री सेल्सियस तापमान वाले क्षेत्रों में पाला जा सकता है। इनका रंग सफेद होता है। एक अंगोरा खरगोश से वर्ष में 3-4 बार ऊन प्राप्त की जा सकती है और प्रति खरगोश 450-600 ग्राम ऊन मिल जाती है। खरगोश की ऊन को भेड़ की ऊन के साथ 50 प्रतिशत की मात्रा में मिलाकर धागा बनाया जाता है जिससे ऊनी वस्त्र, स्वेटर, मफलर, कम्बल आदि तैयार किये जाते हैं। खरगोश की ऊन काफी गर्म होती है। अतः इससे निर्मित वस्त्र सर्दियों में काफी गर्म होते हैं। अंगोरा जाति के खरगोशों से प्राप्त ऊन रेशम की भांति मुलायम होती है।

मांस और खाल के लिए सोवियत चिंचला, न्यूजीलैंड, व्हाइट, ग्रेजाइंट्स, साटनडच, ब्लैक ब्राउन आदि जातियां मुख्य हैं। इनका शारीरिक वजन ढाई से साढ़े पांच किलोग्राम तक होता है। खरगोश के मांस में 20.8 प्रतिशत प्रोटीन और 10.2 प्रतिशत वसा होती है। खरगोश की इन जातियों की खाल से टोपियां, दस्ताने, बटन और बच्चों के लिए आकर्षक खिलौनों का निर्माण किया जाता है जिन्हें बेचकर अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

खरगोश के मैंगनों से उत्तम प्रकार की खाद बनती है जो बहुत ही उर्वर होती है। इसका अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि एक किलोग्राम खरगोश के मैंगनों की खाद तीन किलोग्राम भेड़ के मैंगनों की खाद के बराबर होती है। अतः खरगोश के मैंगनों को खाद के रूप में उपयोग करके विभिन्न फसलों के उत्पादन में काफी वृद्धि की जा सकती है।

खरगोश का प्रजनन

खरगोश के प्रजनन के लिए निम्न दो विधियों का उपयोग किया जाता है :

प्राकृतिक गर्भाधान : खरगोश एक ऐसा पशु है जिसमें प्रजनन सारे साल चलता रहता है, मिलाप कराने के लिए मादा खरगोश को नर खरगोश के पिंजरे में डाला जाता है। मिलाप के तुरंत बाद मादा खरगोश को नर खरगोश से अलग कर दिया जाता है। मादा खरगोश 30 दिन में 8-10 बच्चे दे देती है। एक मादा खरगोश से सही प्रजनन द्वारा एक साल में 20-30 बच्चे मिल जाते हैं। खरगोश छह महीने में वयस्क हो जाता है और प्रजनन के लिए

तैयार हो जाता है। परीक्षणों से पता चला है कि खरगोश का प्रजनन सर्दी के मौसम में ही कराना चाहिए। नर खरगोश प्रजनन कार्य के लिए शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व मादा की उम्र के बराबर होना चाहिए। एक स्वस्थ नर खरगोश 5 मादा खरगोशों के प्रजनन के लिए पर्याप्त होता है। खरगोश के बच्चों को छह सप्ताह बाद मां से अलग करके बेचा जा सकता है। एक खरगोश की कीमत 150-200 रुपये तक होती है। नर और मादा खरगोशों को सदैव अलग रखा जाता है और प्रजनन के लिए मिलाप कराने के उद्देश्य से एक साथ रखा जाता है।

कृत्रिम गर्भाधान : अब खरगोशों में भी कृत्रिम गर्भाधान अपनाया जा सकता है, जो प्राकृतिक गर्भाधान से कहीं बेहतर है। कृत्रिम गर्भाधान के लाभों का उल्लेख नीचे किया गया है :-

1. सबसे बड़ा लाभ यह है कि एक उत्तम गुण वाले नर खरगोश का उपयोग सम्पूर्ण रूप से किया जा सकता है जोकि प्राकृतिक गर्भाधान से संभव नहीं।

2. एक ही समय में अनेक मादा खरगोशों को गर्भवती किया जा सकता है जिससे कि एक निश्चित तिथि पर एक निश्चित आयु के बच्चों की आपूर्ति बाजार में संभव हो जाती है।

3. खरगोश प्रजनन के लिए हमें बहुत सारे नर खरगोशों का पालन नहीं करना पड़ता है क्योंकि एक ही नर से बहुत सी मादाओं को गर्भित किया जा सकता है। इस प्रकार नर खरगोशों के खाने, आवास एवं रख-रखाव की व्यवस्था पर खर्च में बचत होती है।

कृत्रिम गर्भाधान में प्रयुक्त होने वाले नर खरगोशों की आयु कितनी होनी चाहिए यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है। परीक्षणों से पता चला है कि कृत्रिम गर्भाधान में प्रयुक्त होने वाले नर खरगोशों की आयु कम से कम तीन माह और अधिक से अधिक तीन वर्ष होनी चाहिए। इसके अलावा उसका स्वास्थ्य अच्छा हो। इन नर खरगोशों के पैरों में विशेषकर संधियों में, किसी प्रकार का घाव आदि नहीं होना चाहिए क्योंकि इसका प्रभाव उनकी प्रजनन-क्षमता पर पड़ता है। कृत्रिम गर्भाधान कराते समय मादा खरगोश को एक हारमोन का इंजेक्शन लगाना जरूरी है, जो बाजार में सुगमता से मिल जाता है।

कृत्रिम गर्भाधान तकनीक अपनाने से पूर्व इस संबंध में प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त करना नितांत आवश्यक है। केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अंबिका नगर-304501 (राजस्थान) इस विषय पर समय-समय पर प्रशिक्षण देता रहता है। अतः इच्छुक खरगोश पालकों को इस सुविधा का लाभ उठाने के लिए उपरोक्त पते पर संपर्क स्थापित करके कृत्रिम गर्भाधान की तकनीक का प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए ताकि प्रशिक्षण के उपरांत खरगोश की इच्छित जाति के बच्चे वे स्वयं प्राप्त कर सकें।

खरगोश का आहार

खरगोश पालन में संतुलित आहार का विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है जिसकी ओर आमतौर पर खरगोश पालक विशेष ध्यान नहीं देते हैं। इस कारण खरगोशों के स्वास्थ्य, मांस और ऊन उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। संतुलित आहार यदि नर खरगोशों को न दिया जाये तो उनकी प्रजनन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः खरगोश पालकों को चाहिए कि वे अपने खरगोशों को संतुलित आहार उचित मात्रा में दें। आजकल खरगोशों का पौष्टिक आहार बाजार में उपलब्ध होता है किंतु वह बहुत महंगा होता है और साथ में उसमें मिलावट का अंश रहता है। अच्छा तो यह रहेगा कि खरगोश पालक स्वयं ही संतुलित आहार बनाए जो न केवल पौष्टिक होगा बल्कि सस्ता और ताजा भी होगा। खरगोश का संतुलित आहार तैयार करने की विधि का उल्लेख नीचे तालिका में किया गया है :-

तालिका-1

संतुलित आहार की आवश्यक सामग्री

क्रम सं.	वस्तु	मात्रा (प्रतिशत में)
1.	चना	35
2.	जौ	30
3.	गेहूं चापड़	15
4.	खल मूंगफली	10
5.	शीरा	5
6.	दूध पाउडर सोयाबीन	2
7.	खनिज मिश्रण	2
8.	नमक	1

तैयार करने की विधि : चने और जौ को उचित मात्रा में लेकर मोटा दल लिया जाता है और उसमें सभी उपर्युक्त वस्तुएं मिला

दी जाती हैं और 2-3 घंटे तक शुद्ध पानी में भिगोकर फिर उसमें विटामिन ए और डी एक छोटा चम्मच मिला दें। फिर इस तैयार मिश्रण को खरगोश को खाने के लिए दिया जा सकता है। यह मिश्रण अत्यन्त पौष्टिक होता है।

उपरोक्त संतुलित आहार के अतिरिक्त हरी घास, बरसीम, रिजका (न्यूर्सन) को एक प्रतिशत लाल दवा से धोकर दिया जाए। साथ ही गाजर, ककड़ी, खीरा आदि भी देना चाहिए।

आहार की उचित मात्रा

खरगोश को कितनी मात्रा में संतुलित आहार दिया जाए यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है। आवश्यकता से अधिक अथवा कम मात्रा में आहार देना दोनों ही गलत हैं। अतः खरगोश को उचित मात्रा में आहार देना नितांत आवश्यक है जिसका उल्लेख आगे किया जा रहा है।

आमतौर पर खरगोश के बच्चों की आंखें 10 दिन बाद खुलती हैं और वे 15 दिन बाद खाना शुरू कर देते हैं। छह सप्ताह तक वे अपनी मां के पास रहते हैं फिर मां से अलग कर दिये जाते हैं। इस अवधि में और उस अवधि के बाद निम्न मात्रा में संतुलित आहार देकर उन्हें स्वस्थ रखा जा सकता है। साथ ही उनसे ऊन एवं मांस भी अधिक मिलेगा :-

15 दिन से 45 दिन तक	45 दिन से 135 दिन तक	135 दिन से आगे
40-50 ग्राम प्रति खरगोश	50 से 100 ग्राम प्रति खरगोश	100 से 150 ग्राम प्रति खरगोश

आमतौर पर खरगोश के आहार और उनकी देखभाल पर कम खर्च होता है जिससे उन्हें अधिक संख्या में पालकर आमदनी में आश्चर्यजनक वृद्धि की जा सकती है। साथ ही छोटे और सीमांत कृषकों, ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार के अवसर मिलेंगे और उनकी आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति में निश्चय ही सुधार होगा।

अंत में यह प्रश्न उठता है कि अच्छी नस्ल के खरगोश कहां से प्राप्त किए जाएं? अच्छी नस्ल के खरगोश प्रभाग अध्यक्ष, उर्णांजिन पशु अभिजनन मंडल (भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद), गड़सा, जिला कुल्लू घाटी, हिमाचल प्रदेश से पत्र व्यवहार करके उचित मूल्य पर खरीदे जा सकते हैं। अतः इस प्रकार किसान इस सहायक धंधे को अपनाकर खाली समय का सदुपयोग करके अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

संयुक्त सम्पादक, "फसल संदेश"
5 ई/9 बी, बंगला प्लाट,
फरीदाबाद-121001

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिये। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न नहीं होगा उन्हें स्वीकार करना संभव नहीं होगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', 467, कृषि भवन, नई दिल्ली - 110001 के पते पर भेजें।

राष्ट्रीय महिला कोष

✍ इन्दिरा मिश्र
कार्यपालक निदेशक, राष्ट्रीय महिला कोष

भारत की महिलाओं को ऋण की काफी आवश्यकता रहती है। आर्थिक रूप से पिछड़े होने और अक्सर साक्षर न होने की वजह से गरीब महिलाओं को अपने छोटे-छोटे रोजगारों को चलाने व कच्चा माल खरीदने के लिए जरूरी थोड़ी-बहुत पूंजी जुटाना भी मुश्किल हो जाता है।

असंगठित क्षेत्र में 91 प्रतिशत मामलों में ऐसी आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति निजी साहूकारों से ऋण लेकर की जाती है और ये लोग महिलाओं से उस ऋण पर मनमानी दरों से ब्याज वसूल करते हैं जो 24 प्रतिशत से 70 प्रतिशत प्रतिवर्ष तक होता है। इसके अलावा, इन मामलों में रिकार्ड भी साहूकार के पास रहता है जिसमें गड़बड़ी की गुंजाइश रहती है।

यह भी देखा गया है कि महिलाएं, विशेष तौर पर गरीब महिलाएं, ऋण समय पर लौटाने के बारे में अधिक सावधान रहती हैं।

इसके अलावा यह देश की प्रगति में बड़ी रुकावट है कि देश की लाखों करोड़ों धनहीन महिलाओं के कौशल व कारीगरी का उपयोग इसलिए न किया जा सके क्योंकि उन्हें ऋण की सुविधा प्राप्त नहीं है। समाज के प्रत्येक सदस्य के परिश्रम और कौशल का उपयोग करने से प्रगति की गति तेज हो सकती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महिलाओं द्वारा आर्थिक उपार्जन की गतिविधियां चलाना हमारे विकास के लिए आवश्यक है। इन्हीं तत्वों के परिप्रेक्ष्य में 'राष्ट्रीय महिला कोष' की स्थापना की गई है, जिसका उद्देश्य महिलाओं को ऋण उपलब्ध कराना है। कोष एक पंजीकृत संस्था है। इसमें एक आम सभा तथा शासी बोर्ड है तथा इन दोनों की अध्यक्ष केन्द्रीय महिला और बाल विकास राज्यमंत्री हैं। कोष के शासी बोर्ड में केन्द्रीय सरकार के सचिवों के अलावा गरीब महिलाओं को ऋण उपलब्ध कराने के क्षेत्र से संबंध रखने वाली गैर सरकारी संस्थाओं के प्रतिनिधि और समाज सेवी भी शामिल हैं। इसमें देश के किन्हीं दो राज्यों के महिला और बाल विकास विभाग के सचिव बारी-बारी से एक वर्ष के लिए सदस्य रहते हैं।

शासी बोर्ड 'कोष' नीतियां तय करता है। बोर्ड ने अपनी पहली बैठक में ऋण के सिद्धांत निर्धारित किए तथा कोष ने तदनुसार ऋण देना प्रारंभ कर दिया है। कोष ने ऋण के आवेदन पत्रों पर विचार करने के लिए एक ऋण-समिति का गठन किया है जिसकी सिफारिशें महिला और बाल विकास राज्यमंत्री को स्वीकृति हेतु प्रस्तुत की जाती हैं। शासी बोर्ड ने यह तय किया है कि संस्थाओं को ऋण एक निश्चित सीमा तक दिया जाए। अल्पावधि ऋण की अधिकतम राशि 2500 रुपये है और इसका पूर्ण भुगतान 6-15 माह के भीतर करना होगा तथा मध्यावधि ऋण की अवधि दो से पांच वर्ष हो सकती है और इसकी अधिकतम राशि पांच हजार रुपये प्रति लाभार्थी होगी। यह ऋण 8 प्रतिशत की दर पर गैर सरकारी संस्थाओं को दिया जाता है। गैर सरकारी संस्थाओं के लिए यह आवश्यक होगा कि वे इसका भुगतान लाभार्थी को सीधे अथवा स्वसहाय दलों के माध्यम से शीघ्र करें। गैर-सरकारी संस्था लाभार्थी से 12 प्रतिशत ब्याज प्राप्त कर सकती हैं। किसी भी परिस्थिति में लाभार्थी से 12 प्रतिशत से अधिक दर पर ब्याज नहीं लिया जाना चाहिए। पैसे की वापस अदायगी के लिए महिलाओं के स्वसहाय दलों के सामूहिक दबाव से मदद ली जाएगी।

अब तक की प्रगति

कोष द्वारा अपने अस्तित्व के प्रथम वर्ष में लगभग साढ़े चार करोड़ रुपये की ऋण सीमा स्वीकृत की गई है। ऋण सहायता प्राप्त करने वालों में कई महत्वपूर्ण संस्थाएं मौजूद हैं जो पहले से ही इस दिशा में कार्यरत हैं। उदाहरण के लिए वर्किंग विमेन फोरम, मद्रास; अन्नपूर्णा महिला मंडल, बम्बई; श्रमिक भारती, कानपुर; अदिति, बिहार आदि। 'कोष' का आम लोगों ने स्वागत किया है और कुछ लाभार्थियों के शब्दों में, 'कोष' की गतिविधियों से महिलाओं को घर बैठे ऋण प्राप्त होने लगा है, उन्हें इसके लिए न तो विशेष कागजी कार्यवाही करनी पड़ती है, न परेशानी झेलनी पड़ती है और न ही किसी भ्रष्टाचार आदि का सामना करना पड़ता है।

कागजी कार्यवाही सरल

कोष द्वारा अपनाई गई पद्धति ऐसी है कि लाभार्थी को कोई पेचीदा प्रपत्र नहीं भरने पड़ते हैं। यह सब कार्यवाही उनके लिए

(शेष पृष्ठ 27 पर)

कहानी

नया मोड़

✍ योगेन्द्र पाल सिंह

तुरैना गांव के जाटवों ने सैकड़ों साल से कभी चमड़े का काम नहीं किया था। मुख्य व्यवसाय मजदूरी थी, कभी खेतों पर काम करते तो कभी कारखानों में। दो तीन लड़के जो कुछ पढ़ गये थे उन्हें नौकरी मिल गयी। थी। तीन-चार राजगीरी करते थे। उनके कार्य व्यापार भिन्न-भिन्न थे। उस मुहल्ले में सब से बुजुर्ग इतवारी था। उसने सारी उम्र खेतों पर मजदूरी में बितायी थी। शरीर पर मांस का निशान न था। अस्थियों का ढांचा और खाल की ओढ़नी, उम्र 60 साल की थी।

इतवारी ने अपने इकलौते बेटे बुधराम को पुकारा और बोला, "बेटा तेरी मां बिटोरा बनायेगी, जरा पंडित जी से महूरत ही पूछ आ।" बुधराम ने मुंह बनाते हुए इन्कार कर दिया और बोला "दादा पंडित जी जैसा महूरत बताते हैं, मैं समझता हूं। हमारी जैसी कौंमरी होती है वैसे ही उनके गीत होते हैं। हमारे पास दक्षिणा देने को तो कुछ है नहीं फिर पंडित जी क्यों ज्योतिष में सर खपाने लगे। तुम जानते नहीं कि तुम इतवार के दिन पैदा हुए थे इसलिये तुम्हारा नाम पंडित जी ने इतवारी रख दिया था और मैं बुध के दिन पैदा हुआ था इसलिये मेरा नाम बुधराम रख दिया था। हमारे लिये इन ब्राह्मणों का ऐसा ही ज्योतिष है।"

पंडित सुदामा प्रसाद गांव के प्रतिष्ठित आदमी थे। प्रतिष्ठा ज्ञान से और धन से प्राप्त होती है। ये दोनों अवयव उनके पास थे। उनका गांव में अकेला ऐसा परिवार था जिसे शिक्षा प्राप्त थी। उन्होंने धर्म, ज्योतिष और आयुर्वेद की शिक्षा पाई थी। एक छोटी-सी पाठशाला भी चला रखी थी इस पाठशाला का मुख्य लाभ सवर्णों के बच्चों को ही था। अन्य जाति के बच्चों का मन भी शिक्षा में कम लगता था और पंडित जी भी उनसे पिंड छुड़ाने में खुश थे।

एक बार इतवारी ने बुधराम को इसी पाठशाला में पंडित जी की खुशामद करके भर्ती कर दिया था। उसने अपने बाप की महत्वाकांक्षा का आदर करते हुए उस पाठशाला में दो वर्ष का अपमान भरा जीवन काटा। उसे सबसे पीछे जमीन पर बैठना पड़ता था। पंडित जी ने कभी उसकी पट्टी पर अपने हाथ से अभ्यास के लिये लेख नहीं लिखा और हर माह की फीस के पैसे धुलवा कर लेते थे। इस दो वर्ष की यातना के माध्यम से उसने हिन्दी पढ़ना-लिखना तथा थोड़ा-सा व्यवहार गणित सीख लिया था और साथ ही उसने पंडित जी के अनैतिक व्यवहार से उत्पन्न कुंठा भी ग्रहण कर ली थी। उसकी समझ में यह नहीं आता था कि उसके पैसों में कौन-सी गंदगी बसी थी जिसके कारण पंडित जी उसी के पैसे को धुलवाते थे।

अब बुधराम अठारह साल का हो गया था। पाठशाला जब छोड़ी तभी दस वर्ष का था। उन्हीं दिनों उसकी पहचान कस्बे के साईकिल मिस्त्री मजीद से हो गयी थी। मजीद के सुझाव पर उसने खेतिहर मजदूरी छोड़ कर साईकिल मरम्मत का काम सीखा था और मजीद की दुकान पर ही थोड़े-से वेतन पर काम करता रहा। इसी तरह आठ वर्ष गुजर गये थे। थोड़ी-सी मजदूरी उसकी मां भी कर लेती थी। इस प्रकार उस तीन सदस्यों के परिवार का पेट पल रहा था।

गांव से कस्बा एक मील दूर पक्की सड़क के पास था। दो महीने पहले ही आत्म-विश्वास की लहर से प्रेरित होकर बुधराम ने मजीद की नौकरी छोड़ी थी और उसने कस्बे में सड़क के किनारे एक पेड़ के नीचे साईकिल मरम्मत का काम शुरू कर दिया। प्रतिदिन 25-30 रुपये की मजदूरी बन जाती थी। समय आराम से कटने लगा था।

पेड़ के नीचे बुधराम का काम जमने लगा था परन्तु साईकिलों की मरम्मत का काम फूलों की सेज न थी। चार पैसे मिलने लगे थे परन्तु मेहनत भी कमर तोड़ थी। मरम्मत के काम की मजदूरी थी परन्तु देहाती लिहाज में बहुत-सा काम मुफ्त भी करना पड़ता था। आस-पास के प्रतिष्ठित व्यक्तियों की साईकिलों में हवा मुफ्त भरता था। थाने की सभी साईकिलों में हवा भी मुफ्त भरनी पड़ती थी और मरम्मत भी मुफ्त करनी पड़ती थी। यह काम उसे असह्य लगता था। वह जानता था कि यदि उसने इस बेगार से इन्कार किया तो उसी दिन पुलिस वाले उसकी दुकान उठवा देंगे। इसलिये इस मीठे जहर को पीना ही उसने उचित समझा। जैसे ही बुधराम की दुकान पर ग्राहकों की भीड़-भाड़ बढ़ने लगी तो पुलिस की गिद्ध दृष्टि तुरन्त उस पर जम गई और एक दिन थाने के हवलदार ने बुधराम को एकान्त में ले जाकर कहा "अब तो तेरा काम अच्छा चल निकला है कुछ अपनी भी सेवा कर। जैसा दस्तूर है वैसा

कर मुझे पचास रुपया महीना थाने के खर्च के लिये देना होगा।" हवलदार ने यह बात बिना संकोच के कह दी। परन्तु बुधराम यह सुनकर सहम गया क्योंकि व्यापार में नया था। उसने साहस बटोरा और नम्रता से कहा : "दीवान जी छोटा सा मेरा काम है बीस पच्चीस रुपये की मजदूरी यहां से बनती है। बूढ़े मां बाप है मुश्किल से गुजारा चलता है। इस मजदूरी में से पचास रुपया महीना निकालना मेरे बस की बात नहीं है।" इतना सुनते ही हवलदार तमतमा गया और बोला, "यदि पचास रुपये देना तेरे बस की बात नहीं है तो यह सड़क तेरे बाप की है जहां दुकान खोल कर बैठे हो ? कल महीना मिलना चाहिए या फिर यह दुकान यहां नहीं दीखनी चाहिए।" और यह कहता हुआ हवलदार वहां से चला गया।

बुधराम के आत्म-सम्मान को एक ठेस लगी और उसने अगले दिन से दुकान बन्द करने का फैसला कर लिया।

जुगनी उम्र में इतवारी से केवल चार वर्ष छोटी थी। उम्र ढलती जा रही थी। जीवन में बेफिकरी थी। जब आकांक्षायें ही सीमित थीं जो मिल गया वही काफी था, फिकर किस बात की। यदि उसे कोई फिकर थी तो एक कि बुधराम का ब्याह हो जाए और बहू का मुंह देख ले फिर उसके बाद जिन्दगी रहे या न रहे। जब कभी काम से फुरसत पाकर पति-पत्नी पास बैठते तो जुगनी इसी विषय को चला देती थी। "लड़का जवान हो गया, ब्याह की उम्र है कुछ उसके लिये हाथ पैर मारो तभी काम बनेगा। हमारे पास कोई लम्बी चौड़ी जायदाद तो है नहीं कि लड़की वाले हमारे घर की ओर चक्चूंदर की तरह भागते आवेंगे।"

इतवारी इन व्याख्यानों को सुन-सुन कर परेशान हो गया था परन्तु वह लाचार था। उसकी समझ में कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। वह जानता था कि यदि लड़की का रिश्ता लड़के के बाप ने मांगा तो लड़की के बाप के मन में हजार आशंकायें उठ जाती हैं और खोटी कल्पनायें उभरने लगती हैं। वह यही सोचता है कि लड़के में या उसके परिवार में कोई दोष है तभी तो रिश्ता मांगते फिरते हैं।

गर्मी के दिन थे। शाम का समय था। इतवारी घर के बाहर चबूतरे पर बैठा था। तभी साफ सुथरे कपड़े पहने हुए दो आदमी आये और जयराम जी करते हुए चबूतरे पर चढ़ गये। इतवारी ने आवभगत की और हुक्का पानी पिलाया। एक दूसरे के परिचय पूछे गये। बातचीत में एक व्यक्ति ने पूछ ही लिया : "अब बेटा क्या कर रहा है ?" इतवारी ने आत्मविश्वास के साथ उत्तर दिया, साईकिल का काम सीख रखा है। अभी तक कस्बे में साईकिल की मरम्मत का काम करता था पुलिस से नहीं बनी इसलिये काम बन्द कर दिया है। मन का राजा है किसी के दबाव में रहना नहीं चाहता। दर्जा दो तक पढ़ा है हमारे जैसा नहीं है कि दब नव कर जिन्दगी गुजार दी।" दोनों ही व्यक्ति बुधराम के परिचय से सन्तुष्ट हो गये। मुहल्ले के सभी बुजुर्ग इकट्ठे हो गये। सबने अपनी अपनी मन चीती बातें कहीं। खचेरू इतवारी के हम उम्र थे। उनके बिना किसी का रिश्ता तय होना नामुमकिन था। किसी को कुछ पता न था कि लड़की कैसी थी। केवल उसके पिता की बात का विश्वास करते हुए रिश्ता तय हो गया। खचेरू ने कहा था कि दान दहेज की कोई मांग नहीं पर बारात की खातिर अच्छी होनी चाहिए।

बुधराम वैवाहिक जीवन की कल्पनाओं से मन ही मन खुश था तो साथ ही अज्ञात और भविष्य की कल्पनाओं से उद्विग्न। वह मुहल्ले के बुजर्गों से परेशान था जिन्होंने लड़की के विषय में कोई जानकारी लिये बगैर इतवारी से हां करवा ली और रिश्ता तय कर लिया। उन्हें तो फिकर केवल इस बात की थी कि मुहल्ले में रौनक होगी, दावत होगी और चार दिन खुशी के नसीब होंगे। मुहल्लेवाले सब यही चाहते थे कि बुधराम इतवारी का इकलौता बेटा है उसका ब्याह धूमधाम से होना चाहिए। जुगनी भी यही कहती थी कि जैसे तैसे जिन्दगी में खुशी का समय आया है, धूमधाम न हुई तो क्या हुआ ? बुधराम जीवन की वास्तविकताओं के प्रति सचेत था। वह नहीं चाहता था कि कर्ज लेकर विवाह को धूमधाम से सम्पन्न किया जाए और बाद में महाजन की सूद खोरी का शिकार बना जाए। उसने एक दिन अपने बाप को स्पष्ट शब्दों में कह दिया "दादा, हम गरीब आदमी हैं। जैसे तैसे मजदूरी से गुजारा चलता है तुम मुहल्ले वालों की बातों में मत आना। विवाह में हम फिजूल खर्ची नहीं कर सकते।" "फिजूल खर्ची तो मैं भी नहीं चाहता परन्तु बिरादरी को एक दिन रोटी तो खिलानी होगी। उनका खाया है तो खिलाना भी होगा। और बहू के लिये कुछ लत्ते कपड़े बनवाने होंगे। हंसली तो तेरी मां की काम दे जायेगी। यदि इतना न किया तो बिरादरी वाले थूकेंगे।" बाप के आगे बुधराम और अधिक नहीं बोला। उसने समझ लिया कि विवाह के नाम से उसके जीवन में यातनाओं का अध्याय आरम्भ होने वाला है।

इतवारी ने महाजन से कर्ज लेकर बहू के लिये कुछ चांदी के गहने और कपड़े खरीदे। बिरादरी को अच्छी दावत दी और वह सीदा लेकर स्वयं पंडित सुदामा प्रसाद जी के घर गया। पंडित जी को पालागन कह कर उसने सीदा थमाया और बोला "पंडित जी ! जैसे तैसे यह खुशी का वक्त आया है। लड़के का ब्याह तुम्हें ही

पढ़ना होगा।" पंडित जी ने जेब से एक कागज निकाल कर देखा ओर मजबूरी जाहिर करते हुए कहा, "उस दिन कस्बे में लाला मोहन लाल की लड़की का ब्याह है। मैं पहले से ही घिरा हुआ हूं ? जहां बारात जायेगी वहां भी पंडित होगा। फिर क्यों बेकार का खर्चा बढ़ाता है ? ऐसा कह कर पंडित जी ने जान छुड़ाई। इतवारी जय राम जी कर के लौट आया।

मई मास का दूसरा पाख था। गर्मी अच्छी खासी पड़ रही थी। बारात ने दस कोस जाना था। तीन बैलगाड़ियां जमींदारों की ली गईं थीं। सभी बाराती नये-नये कपड़े पहन कर गाड़ियों में बैठ गये। बुधराम को पीले रंग के कपड़े पहनाये गये। सिर पर साफा और मुहर बांधा गया था और एक कटार उसके गले में लटकायी गई। हाथ में बीड़ा भी बांधा गया बुधराम एक पल के लिये अंधी परम्पराओं में बंध गया था। वह जानता था कि मुहर, साफा, कटार और बीड़ा सब कुछ थोथी लकीर पीट थी परन्तु उसने अपने बूढ़े मां-बाप की खुशी के लिये कोई विरोध न किया।

पूरे दिन की धूप में यात्रा करके बारात लड़की के गांव शाम के समय पहुंची। सभी बारातियों के शरीर धूप से काले हो रहे थे और नये-नये कपड़े विरोधाभासी लग रहे थे। लड़की के बाप ने बारात की आवभगत की। गांव के पास ही एक खेत में बारात के जनवासे की व्यवस्था थी।

विवाह संस्कार की सारी तैयारी थी। जब लड़की के बाप मंगला को पता चला कि बारात में पंडित नहीं आये तो वह दौड़ा-दौड़ा अपने गांव के पंडित जी के पास गया और अपनी पुत्री के विवाह संस्कार को विधिवत सम्पूर्ण कराने का निवेदन किया। पंडित जी ने कहा, "मंगला तू समझदार आदमी है। तेरा काम करने में मुझे कोई गुरेज नहीं है। कुछ न कुछ दक्षिणा देगा ही परन्तु मेरे अधिकतर यजमान ठाकुर और बनिये हैं। यदि मैंने तेरी लड़की का ब्याह पढ़ा तो मेरे सारे यजमान बिदक जायेंगे और मेरी रोजी-रोटी ठप्प हो जायेगी और फिर यह कोई मुश्किल काम नहीं जरा सी आग जलाओ, घी और सामग्री डाल लो, हो गया हवन। भगवान का नाम लेकर लड़का लड़की को उसके चारों ओर घुमा दो। जहां तक बचन बोलने का प्रश्न है वे आज के लड़के लड़कियां उन्हें भली प्रकार समझते हैं और थोड़ी बहुत कसर भी रह जाए तो जीवन का यथार्थ सब कुछ उन्हें सिखा देता है।"

मंगला उदास होकर घर लौटा और पंडित जी का उत्तर बिरादरी के सदस्यों को सुनाया। बरातियों को भी बताया गया कि विवाह पंडित जी के बिना ही करना होगा। सभी के मन में उत्साह था। कर्म काण्ड के खोखलेपन को सभी जानते थे। समिधा जलायी गई, सामग्री से हवन हुआ, स्त्रियों का योगदान इस शुभ कार्य में पुरुषों से आधक था। इस प्रकार सीधे सादे ढंग से बुधराम का विवाह पाती से हो गया।

बुधराम आजकल खेतों पर मजदूरी कर रहा था। मां भी हलकी फुलकी मजदूरी कर लाती थी। बुधराम को जीविका कमाने के लिये कठिन श्रम करना पड़ता था परन्तु फिर भी जीवन में खुशी थी और इस प्रकार करीब पांच महीने बीते। जाड़ों के दिन थे। बुधराम मजदूरी करके शाम के समय घर लौटा तो अंधेरा हो चुका थ। उसने अपनी मां के चेहरे पर ही अनिष्ट के भय की छाया देख ली थी। इतवारी जो सदैव द्वार पर ही शाम को मिलता था, नहीं दीखा, इसलिये उसने मां से उत्सुकता से पूछा, "दादा कहां हैं?"

"सुबह से कुछ बेचैन थे, शाम होते होते एक दम अचेत हो गये हैं, घर में खाट पर पड़े हैं।" मां ने उत्तर दिया। बुधराम ने घर में जाकर देखा कि इतवारी खाट पर अचेत पड़ा था, आंखें खुली हुई थीं। चेहरे पर उत्सुकता थी, ऐसा प्रतीत होता कि कुछ बोलना चाहता था परन्तु बोलने में असमर्थ था। बुधराम ने इतवारी का हाथ थामते हुए पुकारा, "दादा ! दादा !"

इतवारी कुछ नहीं बोला, बुधराम एकदम से निकल कर पंडित सुदामा प्रसाद जी के घर की ओर भागा। पंडित जी चौपाल पर बैठे थे। बुधराम ने हड़बड़ाते हुए कहा : "पंडित जी दादा बहुत बीमार हैं, आवाज बन्द हो गई है, जरा चल कर देख लो।" पंडित जी ने आराम से छड़ी उठायी और बुधराम के पीछे-पीछे चल दिये। इतवारी के घर पहुंचे तो देखा कि बहुत सी औरतें घर में जमा थीं, दो चार आदमी घर के बाहर थे, जुगनी जमीन पर बैठी सिसक रही थी।

पंडित जी ने इतवारी की नब्ज तक नहीं देखी, दूर से देखते ही कहने लगे, "बुधराम तुम्हारा दादा बस इतने ही दिन का था। अब हिम्मत से काम लो, समय के आगे किसका बस चलता है।" पंडित जी के पीछे-पीछे खचेड़ू भी आ गया। उसने इतवारी का हाल देखते ही समझ लिया कि अब इतवारी की अन्तिम घड़ी आ गई है, उसने बुधराम को कहा कि दादा को अब धरती पर ले लो और धरती पर लेते लेते इतवारी ने दम तोड़ दिया ? जुगनी बिलख-बिलख कर रोने लगी। सभी स्त्रियों ने जुगनी के साथ रोना-पीटना शुरू कर दिया। बुधराम सिर झुकाये रोने लगा तो खचेड़ू ने उसे सांत्वना दी और खचेड़ू स्वयं भी वेदना के भार से झुक कर जमीन पर बैठ गया।

इतवारी की मृत्यु के चार दिन बाद ही जब बुधराम खेतों की

ओर मजदूरी के लिये जा रहा था तो रास्ते में पंडित जी मिल गये। उन्होंने बुधराम को रोका, बोले "बेटा ! इतवारी नेक आदमी था अपने कर्मों से सीधा स्वर्ग को जायेगा परन्तु फिर भी तर्पण तो करना ही होगा। तेरह सीदे और एक जोड़ी कपड़े ब्राह्मणों को देने होंगे और बिरादरी की दावत जैसे चाहो वैसी करना।" बुधराम ने उदास होकर कहा "पंडित जी मेरी हालत ठीक नहीं है अभी तो ब्याह का कर्ज भी नहीं उतरा।" पंडित जी ने कुछ उत्कंठित होकर कहा, "वह तो तू ठीक कहता है परन्तु यह काम रोज रोज नहीं करना होता।"

"देखूंगा जैसी समवाई होगी वैसा ही करूंगा।" यह कह कर बुधराम खेतों की ओर चला गया।

शाम को जब बुधराम काम पर से लौट रहा था तो महाजन मिल गया। उसने भोलेपन से बुधराम की ओर देखा जैसे शेर घात से पहले शिकार की ओर देखता है और बोला "बेटा ! इतवारी की बहुत बड़ी साख थी। उसने कभी किसी की एक कौड़ी भी नहीं मारी। ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है। कारज के लिये रुपये पैसे की जरूरत हो तो सीधे चले आना, संकोच मत करना। आदमी ही आदमी के काम आता है और ऐसे ही मौके पर तो इंसान की परख होती है। बुधराम ने कहा, "ठीक है।" और यह कहकर घर की ओर चला गया।

जाटवों के मुहल्ले में इतवारी का जिकर कम था और कारज की दावत का अधिक। कुपोषण के कारण अवसाद में भी स्वादिष्ट भोजन की कल्पना आकर्षण बनी हुई थी। सबका विचार था कि कारज के बिना मृतक की आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी और समाज में उसके बिना आदमी मुंह दिखाने लायक नहीं रहता।

शाम के समय जब बुधराम घर पहुंचा तो खचेडू उसके द्वार पर बैठे मिले। जुगनी को किस्से कहानियां सुनाकर सान्त्वना दे रहे थे। बुधराम ने जयराम जी कही और खचेडू को वे सभी बातें बतायीं जो पंडित जी ने और महाजन ने उससे कहीं थीं।

खचेडू ने कहा, "बेटा मैं तेरी हालत देख रहा हूं, पर इस बिरादरी के रिवाजों से निबटना बड़ा मुश्किल है, छोटा सा कारज करले वरना जितने मुंह उतनी ही बातें सुननी पड़ेंगी। बिरादरी में रहना दूभर हो जायेगा। ऐसे काम रोज तो होते नहीं है, एक बार किया और छुट्टी"।

बुधराम इस कर्मकाण्ड के खोखलेपन को समझता था जिसका आविष्कार ब्राह्मणों ने अमीरों की छत्रछाया में किया था परन्तु अब यह परम्परा दानव की तरह अमीर और गरीब दोनों को समान रूप से खाये जा रही थी। जब बुधराम ने देख लिया कि खचेडू चाचा भी इस कार्य के हक में है तो उसके मन का विरोधाभास टूट गया और तेरहवें दिन एक छोटा सा कारज हुआ जिसमें मुहल्ले वालों ने खुशी से दावत खायी। एक सीदा पंडित जी के घर भी पहुंचाया गया। तेरह सीदों का रिवाज पूरा न हो सका क्योंकि गांव में ब्राह्मणों का एक ही घर था।

अभी तक बुधराम शादी के कर्ज से नहीं उबरा था, कारज ने उसे और कर्ज में दबा दिया। यही इस अनुष्ठान की एक मात्र उपलब्धि थी।

बुधराम को गांव से अरुचि हो गई थी। उसने देखा कि अंधी परम्परा के विरोध में खचेडू चाचा ने शुभचिन्तक होते हुए भी उसका साथ नहीं दिया तो उसका मन ऊब गया और उसने गांव की अपेक्षा शहर में नौकरी करने का निश्चय किया। कुछ समय उपरान्त ही उसने शहर में एक जूते की दुकान पर सेल्समैन की नौकरी कर ली। सुबह सात बजे साईकिल लेकर गांव से निकलता और सांझ पड़े घर लौटता। वेतन थोड़ा ही था, जीवन-यापन हो जाता था और महाजन के कर्ज का ब्याज निकल जाता था। मूलधन टस से मस नहीं होता था।

इसी प्रकार छः महीने बीते और बुधराम को यकीन हो गया कि वेतन से महाजन का कर्ज उतरना सम्भव नहीं। उसकी दुकान के मालिक सेवाराम शहर की सामाजिक और राजनैतिक गतिविधियों में रुचि रखते थे। उन्हीं के मुख से राजनैतिक और सामाजिक चर्चाएं सुन-सुन कर बुधराम के ज्ञान का परिवेश विस्तृत होने लगा। एक दिन समय पाकर बुधराम ने अपने गांव के जाटवों की दयनीय दशा सेवाराम जी को बताई और किस प्रकार उनका शोषण गांव के महाजन द्वारा होता था विस्तार से बताया। सेवाराम को इन ग्रामीणों की दशा पर तरस आया और उन्होंने शीघ्र ही बुधराम को तथा उसके गांव के सभी जाटवों को शहर की एक सहकारी ऋण समिति का सदस्य बनवा दिया जहां से वे ब्याज की आसान दर पर कर्ज ले सकते थे। बुधराम ने तथा उसके गांव के अन्य सभी जाटवों ने समिति से रुपये उधार ले लेकर महाजन का कर्ज चुका दिया और उसके चंगुल से मुक्ति पाई।

166, लक्ष्मी बाई नगर,
नई दिल्ली

पंचायती राज और राजीव गांधी

✍ सुभाष चन्द्र 'सत्य'

पंचायती राज व्यवस्था को नया रूप देने और पंचायतों को वास्तव में अधिकार-सम्पन्न तथा प्रतिनिधि संस्था बनाने के उद्देश्य से लाया गया, 73वां संविधान संशोधन अब समूचे देश में लागू हो गया है। हाल ही में सभी राज्यों की विधान सभाओं द्वारा इस संशोधन के अनुरूप कानून बना लिए जाने पर इसके प्रावधान सभी राज्यों में लागू हो गए हैं। वैसे यह कानून एक अधिसूचना के माध्यम से 24 अप्रैल, 1993 को अमल में आ गया था। इससे पहले देश की आधी से अधिक विधान सभाओं की पुष्टि के बाद 20 अप्रैल को इसे राष्ट्रपति ने अपनी सहमति दी।

पंचायती व्यवस्था को सशक्त बनाने के प्रेरणा स्रोत स्वर्गीय राजीव गांधी थे जिन्होंने निचले स्तर पर आम लोगों को सत्ता सौंपने के इरादे से संविधान में संशोधन करने का निश्चय किया। परंतु विभिन्न कारणों से यह संशोधन विधेयक कानून नहीं बन सका। इस घटनाक्रम पर विचार करने से पहले भारत में पंचायती व्यवस्था के इतिहास पर सरसरी निगाह डाल लेना उचित होगा।

हमारे देश में पंचायती राज प्रणाली का इतिहास यद्यपि बहुत पुराना है परंतु लोकतंत्र में निचले स्तर पर लोगों को विकास प्रक्रिया में भागीदार बनाने के उद्देश्य से इसका महत्व आज के समय में और अधिक हो गया है। देश की परंपरागत पंचायती प्रणाली के लाभों से प्रेरित होकर ही महात्मा गांधी ने स्वाधीनता से पूर्व पंचायती व्यवस्था को पुनर्जीवित करके सत्ता को जनता के हाथों में सौंपने की कल्पना की थी। इसी सपने को साकार करने के लिए स्वतंत्रता के पश्चात इस व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर विशेषज्ञों की अनेक समितियों के विचार-विमर्श के आधार पर सामुदायिक विकास और पंचायती राज व्यवस्था लागू करने का फैसला किया गया। सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में शुरुआत के तौर पर 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ और दूसरी पंचवर्षीय योजना में ग्राम पंचायतों के साथ-साथ सहकारी समितियों की सक्रिय भागीदारी पर बल दिया गया। इस कार्यक्रम के अनुभव तथा 1957 में गठित बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था की संरचना की गई और प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने 2 अक्टूबर, 1959 गांधी जयंती के दिन राजस्थान में नागौर जिले में एक विशाल जनसभा में पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन किया।

दुर्भाग्यवश यह पंचायती राज व्यवस्था अपने उद्देश्यों को पूर्ण करने में विफल रही और विभिन्न समितियों द्वारा की गई समीक्षा से यह बात सामने आई कि सत्ता विकेन्द्रित होने की बजाय गांवों में कुछ खास वर्गों के हाथ में केन्द्रित हो गई है। हालांकि अलग-अलग राज्यों में इस स्थिति के कारण अलग-अलग देखने को मिले परंतु यह महसूस किया गया कि दो-तीन राज्यों को छोड़कर अधिकतर राज्यों में इस प्रणाली में अनेक विकार आ गए थे जिससे यह लोगों की भलाई का नहीं बल्कि शोषण और निहित स्वार्थों की पूर्ति का साधन बन गई थी। आर्थिक घोटाले, चुनाव न कराने, नौकरशाहों और राज्य सरकारों के अत्यधिक वर्चस्व जैसे अनेक कारणों से समूची व्यवस्था जड़ता का शिकार बन गई और जो संसाधन उपेक्षित, जरूरतमंद, निर्धन तथा दलित वर्गों के लिए निर्धारित किए जाते, उनका बहुत बड़ा हिस्सा बिचौलियों के पेट में चला जाता।

परिवर्तन की तीव्र कामना तथा नए सपनों से प्रेरित होकर युवा प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने गांवों में सत्ता के केन्द्रीकरण को समाप्त करके सही अर्थों में लोगों को विकास प्रक्रिया में भागीदार बनाने का निश्चय किया। राजीव गांधी का युवा-मन इस बात से अत्यंत विचलित था कि सरकार की ओर से गरीबी उन्मूलन और सामाजिक न्याय के उद्देश्य से जो प्रयास किए जाते हैं उनके परिणाम समाज के लोगों के जीवन में खुशहाली नहीं ला पाते। इसी पीड़ा को व्यक्त करते हुए राजीव गांधी ने 15 अक्तूबर, 1989 को अलीगढ़ में एक सभा को सम्बोधित करते हुए जो शब्द कहे थे उन्होंने उस समय जनमानस को झकझोर दिया था। उन्होंने पंचायती राज तथा नगर पालिका विधेयकों की ओर संकेत करते

हुए कहा, "ये विधेयक आवश्यक हैं, क्योंकि सरकारी योजनाओं के लाभ आम आदमी तक नहीं पहुंचते। योजनाओं के कुल मूल्य का केवल 15 प्रतिशत ही वास्तविक लाभार्थियों तक पहुंच पाता है, शेष राशि लालफीताशाही के कारण बरबाद हो जाती है।"

इसी चिंताजनक स्थिति को बदलने के लिए उन्होंने सच्चे अर्थों में पंचायती राज व्यवस्था कायम करने की दिशा में प्रयास किये। इसमें कोई संदेह नहीं कि राजीव गांधी अपने इस उद्देश्य के प्रति पूरी तरह वचनबद्ध थे। इसका प्रमाण यह तथ्य है कि पहले से समितियों द्वारा दी गई रिपोर्टों पर उन्होंने नए संदर्भों तथा नई परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न स्तरों पर विचार-विमर्श को प्रोत्साहित किया और पंचायती राज प्रणाली राष्ट्रीय बहस का विषय बन गई। वे जानते थे कि नौकरशाही का चिंतन तथा मानसिकता बदले बिना किसी भी योजना को सही ढंग से क्रियान्वित कर पाना कठिन है। इसलिए उन्होंने जिलाधिकारियों, क्लेक्टरों तथा जिला स्तर के अन्य अधिकारियों से स्वयं सीधे संपर्क करने का निश्चय किया। अधिकारियों की बैठकें आयोजित की गईं, जिनमें वे स्वयं भाग लेकर उनसे बातचीत करते थे। उनके विचार भी सुनते और उनसे सवाल भी करते। उनका मकसद प्रशासन को जनता के प्रति जवाबदेह बनाना और अधिकारियों को यह समझाना था कि पंचायती राज व्यवस्था केवल राजनीतिक प्रक्रिया नहीं है बल्कि सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन तथा दूर-दराज के इलाकों व गांवों में बसे निर्धन, साधन-विहीन लोगों का जीवन-स्तर सुधारने का सशक्त माध्यम है। उनका मानना था कि उपेक्षित वर्गों को पंचायती राज संस्थाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।

उसके बाद उन्होंने मुख्य सचिवों तथा भारत सरकार के सचिवों की बैठकें बुलाई। पंचायती राज मंत्रियों के सम्मेलन में भी इस मुद्दे पर व्यापक चर्चा हुई। क्षेत्रीय पंचायती राज सम्मेलनों के अलावा 27 से 30 जनवरी, 1989 तक नई दिल्ली में सारे देश के प्रतिनिधियों का सम्मेलन हुआ। वह सम्मेलन मूल रूप से तीन दिन का था किंतु विषय की गंभीरता को देखते हुए उसे एक दिन के लिए बढ़ा दिया गया।

भावी पंचायती राज व्यवस्था के स्वरूप के संबंध में महिलाओं के विचार जानने के लिए 3 और 4 मई 1989 को "पंचायती राज और महिलाएं" विषय पर सम्मेलन हुआ। इसमें 23 राज्यों से लगभग 800 महिला पंचों, सरपचों तथा पंचायती संस्थाओं की प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसी सम्मेलन में राजीव गांधी ने पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखने की घोषणा की। उन्होंने यह भी कहा कि अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए सुरक्षित स्थानों में भी इन वर्गों की महिलाओं के लिए अलग से आरक्षण होगा। इसमें लगभग 60 महिला प्रतिनिधियों ने भी अपने विचार प्रकट किए। राज्यों के मुख्यमंत्रियों का भी सम्मेलन हुआ जिसमें प्रस्तावों को एक प्रकार से अंतिम रूप दिया गया। इसमें राजीव गांधी ने कहा "आपके सामने हम जो प्रस्ताव रख रहे हैं दरअसल वे हमारे प्रस्ताव नहीं हैं। ये तो भारत की जनता के प्रस्ताव हैं जिन्हें उनके प्रतिनिधियों ने पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से व्यक्त किया है। इसलिए यह अपने आप में एक ऐतिहासिक अवसर है।"

स्वतंत्र भारत के इतिहास में इससे पहले किसी विषय पर इतने बड़े पैमाने पर शायद ही कभी विचार-विमर्श हुआ होगा। इस गहन और व्यापक विचार मंथन से जो मोती निकले उन्हें पिरोकर ही विधेयक रूपी माला तैयार की गई जिसे 25 मई 1989 को 64वें संविधान संशोधन विधेयक के नाम से संसद में प्रस्तुत किया गया। इसमें पंचायती राज संस्थाओं के नियमित चुनाव, वित्तीय अधिकारों में वृद्धि, महिलाओं और कमजोर वर्गों के लिए आरक्षण जैसे वे सभी प्रावधान थे जो व्यापक विचार-विमर्श के दौरान सामने आये थे या जिनका आश्वासन राजीव गांधी ने अपने वक्तव्यों में दिया था। विधेयक पेश करते हुए उन्होंने कहा, "भारत में लोकतंत्र के विकास के इतिहास में जो घटना सबसे महत्वपूर्ण है वह है संविधान का निर्माण... यह ऐतिहासिक एवं क्रांतिकारी विधेयक भी उतना ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके जरिये निम्नतम स्तर पर लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था को संविधान में स्थान दिया गया है।"

ये शब्द इस तथ्य को स्पष्ट रूप से उजागर करते हैं कि पंचायती राज व्यवस्था को पुनर्जीवित करना राजीव गांधी के जीवन का एक महत्वपूर्ण सपना था जिसमें राजनीति नहीं, बल्कि भारत के आम लोगों को सत्ता की बागडोर सौंपने की सच्ची इच्छा थी। परंतु 64वां संविधान संशोधन विधेयक राजनीति का शिकार हो गया और लोकसभा में पारित होने के बाद राज्य सभा में वह पारित न हो सका और इस प्रकार सत्ता के विकेन्द्रीकरण का प्रगति रथ कुछ समय के लिए रुक गया। विपक्षी दलों ने इसका विरोध यह कह कर किया कि इस विधेयक के प्रावधानों से राज्यों के अधिकार कम हो जाएंगे और केन्द्र का वर्चस्व बढ़ जाएगा।

1989 में संविधान संशोधन संसद में भले ही पारित नहीं हो सका किंतु राजीव गांधी ने सच्चा ग्राम स्वराज लाने का जो पौधा लगाया था वह पूरी तरह सूख नहीं पाया। विपक्षी दलों को उस विधेयक के जिन मुद्दों पर आपत्ति थी उनमें कुछ फेर बदल करके 1990 में जनता दल सरकार ने नया संविधान संशोधन संसद में पेश किया। परंतु विधेयक पारित होने से पहले ही सरकार गिर गई और पंचायती राज व्यवस्था सुचारु बनाने का सिलसिला एक बार फिर रुक गया।

1991 में नरसिंह राव सरकार सत्ता में आई तो उसने अपने स्वर्गीय नेता राजीव गांधी का सपना साकार करने का संकल्प दोहराया। वास्तव में सत्तारूढ़ दल ने अपने चुनाव घोषणापत्र में भी गांवों के लोगों को शासन सौंपने का वादा किया था। इसी उद्देश्य से सरकार की ओर से सितम्बर 1991 में संसद में संविधान संशोधन विधेयक पेश किया गया जिसमें 1989 में प्रस्तुत विधेयक की सभी प्रमुख बातें शामिल थीं। सदन के सभी पक्षों द्वारा विधेयक के प्रावधानों की गहराई से छानबीन करने के मकसद से इसे संयुक्त प्रवर समिति को सौंप दिया गया। समिति की सिफारिशों के आधार पर इसे संसद ने पारित कर दिया। 22 दिसम्बर, 1992 को लोकसभा ने और उसके अगले दिन राज्यसभा ने इसे स्वीकृति दे दी। जैसे कि ऊपर बताया जा चुका है राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलने के बाद 24 अप्रैल, 1993 को 73वां संविधान संशोधन कानून लागू हो गया।

इस क्रांतिकारी विधायी उपाय से निचले स्तर पर लोकतंत्र की स्थापना तथा ग्राम स्वराज को असली जामा पहनाने का रास्ता प्रशस्त हो गया है। इसके लागू हो जाने से पंचायती राज व्यवस्था में व्याप्त जड़ता और भ्रष्टाचार को दूर करने में निश्चय ही मदद मिलेगी क्योंकि इसमें ऐसे अनेक प्रावधान जोड़े गए हैं जिनसे इस व्यवस्था का दुरुपयोग हो पाने की गुंजाइश काफी घट गई है और पंचायती राज संस्थाएं सही मायनों में समाज की प्रतिनिधि संस्थाएं बन जाएंगी। विधेयक की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं:

- पंचायती राज प्रणाली तीन स्तरों वाली होगी। ग्राम स्तर, मध्यवर्ती स्तर तथा जिला स्तर। बीस लाख के कम जनसंख्या वाले राज्यों को यह छूट होगी कि वे अपने यहां मध्यवर्ती स्तर की संस्थाएं बनाएं या न बनाएं।

- तीनों स्तरों पर सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली से होगा। ग्राम पंचायतों के सरपंच मध्यवर्ती संस्थाओं के सदस्य बन सकेंगे। इसी प्रकार मध्यवर्ती स्तर के सदस्य जिला स्तर की संस्थाओं के भी सदस्य बन सकेंगे।

- आमतौर पर पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष होगा और कार्यकाल समाप्त होने से पहले ही चुनाव करा लिए जायेंगे। पंचायत भंग किए जाने की स्थिति में 6 महीने के भीतर चुनाव कराना अनिवार्य होगा।

- पंचायतों के लिए मतदाता सूचियां बनाने और चुनाव प्रक्रिया के संचालन और देखरेख के लिए स्वतंत्र निर्वाचन आयोग गठित किया जाएगा।

- सभी पंचायतों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटें सुरक्षित रहेंगी। कुल सीटों की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए सुरक्षित रहेंगी।

- विकास योजनाएं लागू करने के लिए पंचायतों को पर्याप्त धन उपलब्ध कराया जाएगा।

- प्रत्येक राज्य में एक साल के अंदर तथा उसके पश्चात हर पांच वर्ष बाद वित्त आयोग गठित किया जाएगा जो उन सिद्धांतों को निर्धारित करेगा जिनके आधार पर पंचायतों को संसाधन उपलब्ध कराए जाएंगे।

- पंचायतों को कर एकत्र करने की अनुमति देने अथवा राजस्व का कुछ भाग पंचायती राज संस्थाओं को देने के मामले राज्य सरकारें स्वयं तय करेंगी।

इस प्रकार इस विधेयक के रूप में केन्द्र ने राज्यों के सामने एक आदर्श उपाय प्रस्तुत किया है जिसके माध्यम से वे अपने अधिकार निचले स्तर तक सौंप सकते हैं। इसी बात पर बल देते हुए प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव ने 5 मई, 1993 को सभी ग्राम पंचायतों को पत्र लिखकर उन्हें उनके अधिकारों की याद दिलाई और इस कानून के माध्यम से मिली शक्ति का सूझबूझ के साथ इस्तेमाल करने का उनसे अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "नया कानून यह सुनिश्चित करेगा कि वास्तविक अधिकार केवल आपको मिलें और आपसे उम्मीद की जाती है कि आप अपने इलाके और वहां के लोगों के विकास में अधिक कारगर भूमिका

निभाएं। इस काम में किसी भी वर्ग के मन में यह विचार पैदा नहीं होगा कि उसे इस काम से अलग रखा जा रहा है।"

अब क्योंकि सभी राज्यों ने 73वें संविधान संशोधन के अनुरूप अपने-अपने पंचायती राज विधेयक पारित कर लिए हैं, अतः वास्तविक काम प्रारंभ करने का समय आ गया है। आवश्यकता इस बात की है कि स्वर्गीय राजीव गांधी ने जिस पीड़ा से प्रेरित होकर निचले स्तर पर वास्तविक सत्ता सौंपने का सपना देखा था उसे दूर करने का प्रयास करते हुए राज्यों को अपने अधिकारों में कटौती करके सही अर्थों में ग्राम स्वराज की नींव डालनी चाहिए। आशा की जानी चाहिए कि सभी स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं को फिर से सक्रिय बनाकर अधिकारों के विकेन्द्रीकरण को कार्यरूप दिया जाएगा जिससे आम लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान में मदद मिलेगी। यही राजीव गांधी को सच्ची श्रद्धांजलि भी होगी।

1370, सैक्टर-12,
आर. के. पुरम,
नई दिल्ली-110022

(पृष्ठ 19 का शेष)

गैर सरकारी अथवा स्वायत्त संस्था अथवा स्वसहाय दल द्वारा की जाती है। स्वसहाय दल जो कि 5 से 20 महिलाओं के समूह के हो सकते हैं, एक ही गांव अथवा वार्ड में निवास करते हैं। इन दलों की नेता अथवा मुखिया का चुनाव उनके द्वारा स्वयं ही किया जाता है। इन दलों से अपेक्षा की जाती है कि वे सभी सदस्यों से कुछ बचत राशि नियमित रूप से जमा कराएंगे, साथ ही जरूरतमंद सदस्यों को ऋण प्रदान करेंगे। उनसे आशा की जाती है कि वे राशि के प्रबंधन तथा ऋण और बचत प्रबंध प्रक्रिया में कुशल होंगे। इन दलों की नियमित साप्ताहिक/मासिक बैठकें होंगी जिसमें वे अपनी समस्याओं पर चर्चा करेंगे और साथ ही साप्ताहिक अथवा मासिक रूप से कुछ बचत राशि भी नियमित रूप से जमा करेंगें। यह राशि बैंक में जमा की जाएगी, जिसका ब्याज या तो सभी सदस्यों में बांट दिया जाएगा अथवा उससे एक सामूहिक राशि का निर्माण किया जाएगा। इसे किसी सामूहिक लाभ, उदाहरण के लिए, सामूहिक बीमा में लगाया जा सकता है।

स्वसहाय दल महिलाओं की शक्ति के महत्वपूर्ण सोपान

महिलाओं के स्वसहाय दलों की नियमित बैठक अपनी समस्याओं से जूझने के लिए और महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए एक उपयोगी स्थल प्रदान करती है। ऐसे स्थलों पर विभिन्न सदस्यों की सामूहिक आवश्यकता का ज्ञान तथा उसकी सशक्त अभिव्यक्ति हो सकती है। किसी भी संस्था अथवा सरकार के समक्ष स्वसहाय दल अपनी मांग रख सकते हैं। सामूहिक अभिव्यक्ति से महिलाओं को ताकत मिलती है तथा वे घर में अथवा बाहर किसी अन्याय का विरोध कर सकती हैं। 'कोष' के लिए स्वसहाय दलों की भूमिका महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि कई आवेदनों को इस कार्यालय द्वारा इसलिए वापस किया गया है क्योंकि उन संस्थाओं ने ग्राम स्तर पर स्वसहाय दलों का गठन नहीं किया था। राष्ट्रीय महिला कोष का उद्देश्य महिलाओं को ऋण देने के साथ-साथ उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाना तथा यह सिखाना है कि ऋण कैसे लिया जाता है और उसका उपयोग किस प्रकार किया जाता है। इस प्रकार 30 मार्च, 1993 को पंजीकृत राष्ट्रीय महिला कोष ने एक नई विचारधारा का सूत्रपात किया है। महिला और बाल विकास विभाग द्वारा लम्बे विचार-विमर्श के उपरांत तथा देश व विदेश की कुछ स्वायत्त संस्थाओं के अनुभव को देखते हुए तथा महिलाओं को विकास की धारा में एक अपरिहार्य स्तंभ मानते हुए 'राष्ट्रीय महिला कोष' का गठन किया गया है। यह भी उल्लेखनीय है कि चूंकि महिलाओं को उधार ली गई राशि को लौटाने की ज्यादा चिन्ता होती है, इसलिए वे उसका निवेश करने में अधिक सावधान रहती हैं तथा उसका उपयोग करने के लिए अधिक परिश्रम करती हैं।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

पंचायती राज और महिलाएं

✍ सुंदर लाल कुकरेजा

स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी की पचासवीं वर्षगांठ के वर्ष में उनका यह सपना पूरा हो गया जो उन्होंने ग्राम पंचायतों को लोकतंत्र का मजबूत आधार बनाने के लिए देखा था। ग्रामीण क्षेत्र में पंचायतों को पुनर्जीवित करके उनमें महिलाओं और कमजोर वर्गों की साझेदारी को बढ़ावा देकर गांवों में वास्तविक स्वराज लाने के लिए उन्होंने संविधान में जो संशोधन करना चाहा था, वह भले ही तकनीकी कारणों से पूरा न हो सका, लेकिन वर्तमान सरकार ने उन्हीं भावनाओं और उद्देश्यों को आगे बढ़ाकर संविधान में 73वां संशोधन कर लिया है और अधिसंख्य राज्यों ने भी उसकी पुष्टि कर दी है। भारत के गांवों को विकास का पहला आधार बनाने वाले स्वर्गीय राजीव गांधी के अर्द्धशताब्दी वर्ष में उनके प्रति यही सच्ची श्रद्धांजलि है कि उनके अधूरे कामों को पूरा किया जा रहा है।

संविधान के 73वें संशोधन द्वारा देश भर में एक ऐसी समरूप पंचायत प्रणाली का पुनर्जन्म होगा जिसमें अपने क्षेत्र की विकास संबंधी समस्याओं का समाधान खोजने में ग्रामीण जनता स्वयं पहल कर सकेगी और क्षेत्र की सभी सामाजिक-आर्थिक गतिविधियां उसके अधीन होंगी। पंचायती राज व्यवस्था भारतीय लोकतंत्र की सबसे छोटी लेकिन सबसे महत्वपूर्ण और संभवतः सबसे प्रभावी इकाई बन जायेगी। 73वें संविधान संशोधन में ग्राम पंचायतों में महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत स्थान आरक्षित कर ग्रामीण स्वराज में उनकी सक्रिय भागीदारी को सुनिश्चित कर दिया गया है।

भारतीय समाज व्यवस्था में यद्यपि पंचायतों का अपना विशिष्ट स्थान और महत्व है, किंतु अनेक कारणों से पंचायतों का अस्तित्व विलुप्त होने लगा था और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी केन्द्रीकृत आयोजना और देश के आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाने के प्रयासों के कारण पंचायतों की ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जा सका, यद्यपि इस दिशा में कई प्रयास अवश्य किए गए। 1980 के दशक के आरंभ में अशोक मेहता समिति की सिफारिशों के आने के बाद विभिन्न स्तरों पर उनका मंथन होता रहा और उसमें से निकले निचोड़ के आधार पर 1989 में राजीव गांधी सरकार ने संविधान में संशोधन कर पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने के लिए संसद में विधेयक प्रस्तुत किया। तब राज्यसभा में कोरम के अभाव में वह विधेयक गिर गया, लेकिन उसकी भावना बलवती रही और उसी विधेयक को मामूली परिवर्तनों के साथ 73वें संविधान संशोधन के रूप में 1992 में वर्तमान नरसिम्हं राव सरकार ने पारित करा लिया।

पंचायती राज व्यवस्था लागू हो जाने से ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर जनता को प्रशासन में सीधी भागीदारी का अवसर तो मिलेगा, किंतु इसका सबसे पड़ा लाभ महिला-शक्ति को होगा। वैसे तो देश के काफी बड़े भाग में पंचायतें हैं ही नहीं, लेकिन जहां हैं भी, उनमें महिलाओं की संख्या और उसमें भी निर्णय करने में उनकी भागीदारी नगण्य ही है। कई राज्यों में, जहां पंचायतें अब भी कुछ सक्रिय हैं, गांव की किसी बुजुर्ग, सम्मानित महिला को ग्राम पंचायत में मनोनीत तो कर लिया जाता है, किन्तु कोई निर्णय लेने में उनकी ओर से न पहल हो पाती है, न ही उनकी राय को अधिक महत्व दिया जाता है।

तीस प्रतिशत आरक्षण

अब नई व्यवस्था के अंतर्गत जो पंचायतें गठित होंगी, उनमें संवैधानिक रूप से महिलाओं के लिए कम से कम तेंतीस प्रतिशत या एक तिहाई स्थान आरक्षित रहेंगे। अनुसूचित जातियों और जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात में उनके लिए जो स्थान आरक्षित होंगे, उनमें भी तीस प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए होंगे।

इस व्यवस्था से पंचायती राज प्रणाली में महिलाओं को वह राजनीतिक शक्ति और महत्व देने का व्यावहारिक कदम उठाया गया है जो उन्हें अभी तक केवल सैद्धांतिक रूप से ही मिला हुआ था। संविधान में यद्यपि महिलाओं और पुरुषों को एक समान सामाजिक-राजनीतिक अधिकार प्राप्त है और वे किसी भी चुनाव में हिस्सा ले सकती हैं, किंतु व्यवहार में संसद और विधान मंडलों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत कम है। देश भर में लगभग 6500 सांसदों और विधायकों में से महिलाओं का प्रतिशत दो से

अधिक नहीं है जिसका अर्थ यह है कि देश का शासन चलाने में महिलाओं की राय और उनके अनुभव को पूरा महत्व नहीं मिल पाता है।

सच तो यह है कि महिलाओं को अब तक उनके अधिकारों से वंचित रखा गया है और सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में आगे बढ़ने के उनके मार्ग को निष्कंटक बनाने की बजाय उसमें अवरोध खड़े करने के प्रयास अधिक किए गए। ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि जब भी महिलाओं को आगे आने का अवसर मिला है, उन्होंने अपनी योग्यता व क्षमता का पूरा उपयोग किया है। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि समय आने पर वह कोई भी जिम्मेदारी उठा सकती हैं और उसे अच्छी तरह निभा भी सकती हैं। महाराष्ट्र की महिलाओं को यह गौरव प्राप्त है कि वहां नौ पंचायतें ऐसी थीं जहां केवल महिलाएं ही पंच थीं। आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश में भी केवल महिलाओं वाली पंचायतें काम कर चुकी हैं। 1992 में उड़ीसा में जब पंचायतों के चुनाव हुए तो महिलाओं के लिए आरक्षित एक तिहाई स्थानों से कहीं अधिक संख्या में महिलाएं चुनी गईं।

पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं के लिए तेंतीस प्रतिशत स्थान आरक्षित कर उन्हें उनके वांछित और वैध अधिकार और अवसर प्रदान किए गए हैं। यह एक नई क्रांति का आह्वान है और आने वाले समय में इसके चमत्कारी परिणाम सामने आयेंगे।

नौ लाख महिला प्रतिनिधि

संविधान में पंचायती राज की जो व्यवस्था की गई है, उसके पूरी तरह लागू हो जाने पर देश भर में जनता द्वारा चुनी हुई महिला प्रतिनिधियों की संख्या लगभग नगण्य से बढ़कर करीब नौ लाख तक पहुंच जायेगी। उनके लिए ग्राम पंचायत, ब्लाक पंचायत और जिला परिषद में सभी तीनों स्तरों पर एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। इन तीनों स्तरों पर पंचायतों के अध्यक्ष पद के एक तिहाई स्थानों पर भी महिलाएं ही बैठ सकेंगी।

देश भर में ग्राम पंचायतों की संख्या लगभग सवा दो लाख होगी। आबादी के अनुपात से एक पंचायत में पांच से 14 तक पंच चुने जा सकेंगे। अगर हर पंचायत में औसतन दस पंचों का निर्वाचन हो तो कुल पंचों की संख्या लगभग साढ़े बाइस लाख होती है। इनमें अगर एक तिहाई महिलाएं हों तो उनकी संख्या लगभग साढ़े सात लाख होगी। अगर यह माना जाए कि एक स्थान के लिए दो या तीन महिला उम्मीदवार होंगी तो चुनाव लड़ने वाली महिलाओं की संख्या 18 से 20 लाख के बीच होगी। इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं का बाहर आना और चुनाव मैदान में उतरना निश्चित ही समाज में नई चेतना जगाएगा।

इतनी संख्या में पंचायतों के कारण ब्लाक स्तर की पंचायतों की संख्या पांच से छह हजार के बीच होने का अनुमान है जिनमें सवा लाख प्रतिनिधि होंगें। इनमें भी करीब चालीस हजार महिलाएं हो सकती हैं। इसी प्रकार लगभग 500 जिला परिषदों में 15 हजार चुने हुए पंच-सरपंच होंगे और उनमें भी पांच हजार महिलाएं होंगी।

अगर तीनों स्तरों की इन पंचायतों के अध्यक्ष पद पर एक तिहाई महिलाओं की संख्या पूरी हो जाए तो इस प्रकार भी करीब 73 हजार पद उन्हें मिल सकते हैं। कुल मिलाकर नौ लाख महिलाएं पंचायती व्यवस्था के कारण ग्रामीण क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों तथा विकास कार्यों में सक्रिय भागीदारी कर सकेंगी।

अब तक के लगभग दो प्रतिशत प्रतिनिधित्व से ऊपर उठकर इतनी बड़ी संख्या में विभिन्न पदों तक पहुंचने से निश्चय ही महिलाओं में अधिक जागृति आएगी, लेकिन साथ ही उनके कंधों पर अधिक जिम्मेदारी का बोझ भी आ जाएगा।

जिम्मेदारी उठाने की तैयारी

महिलाओं के लिए पंचायती राज संस्थाओं में किए गए आरक्षण से उन्हें न केवल सामाजिक-राजनीतिक क्षेत्र में आगे बढ़ने का अवसर मिलेगा, अपितु उनके लिए आगे की बड़ी संस्थाओं—विधान मंडलों और संसद—में भी उनके अधिक प्रतिनिधित्व व सक्रिय भागीदारी का मार्ग प्रशस्त करेगा। सबसे बढ़कर इस प्रयोग से महिलाओं को प्रशासनिक अनुभव प्राप्त होगा जिसका उपयोग जीवन के हर क्षेत्र में किया जा सकेगा।

पंचायतों के कार्य और अधिकार-क्षेत्र का निर्धारण तो संबंधित राज्य सरकारें अपने-अपने कानूनों से करेंगी, किंतु इतना निश्चित है कि अपनी स्थानीय समस्याओं और विकास संबंधी कठिनाइयों का निवारण और आपसी विवादों को हल करने का दायित्व इन पंचायतों और विशेषकर महिला पंचों पर होगा। वैसे अनेक क्षेत्र और विषय हैं जिनमें स्वयं महिलाओं और अन्य पंचों को पहल करके आगे आना होगा।

चाहे गांवों में साक्षरता के प्रसार का अभियान हो, या गांव के युवकों को रोजगार उपलब्ध कराने का मामला हो गांव में पीने के पानी की समस्या हो या स्वच्छता का सवाल हो अथवा फसलों

को बीमारियों से बचाने की बात हो, यह सब काम ग्रामीण महिलाएं ही आपसी सहयोग और विकास कार्यों में सबकी भागीदारी सुनिश्चित करके कर सकती हैं। बढ़ती आबादी की रोकथाम, पर्यावरण की रक्षा, बच्चों को पौष्टिक व संतुलित आहार देने और सबसे बढ़कर स्थानीय संसाधनों की अधिकाधिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की दिशा में महिलाएं अपना नेतृत्व दे सकती हैं।

पंचायतों को मजबूत बनाने का मूलभूत उद्देश्य और अंततः लक्ष्य भी यही है कि अपनी स्थानीय समस्याओं को जनता स्वयं हल करने की ओर प्रेरित हो और हर काम के लिए प्रदेश की राजधानी में स्थित विधानसभा या सरकारी अधिकारियों पर आश्रित न रहे।

साभारः पत्र सूचना कार्यालय

लघु कथा

देखा-देखी

✍ आलोक 'चन्द्र'

एक बस्ती थी, शहर के अन्तिम छोर पर, जो अपनी तंगहाली और अव्यवस्था के लिए दिन भर में हज़ारों बददुआएं, नगर महापालिका वालों को देती। उस बस्ती में निम्न मध्यवर्गीय तबके के हजारों व्यक्ति निवास करते थे जिनका जीवन चक्र उस स्वचालित खिलौने की भांति था, जिसकी चाबी भर कर, उसे अपने हाल पर छोड़ दिया गया हो, ...खाना, पीना, आपस में झगड़ा करना और यूं जीवन से जूझते रहना....।

उस तंगहाल बस्ती में, बीचोंबीच, एक नया आलीशान विशाल भवन बनकर खड़ा हुआ। खड़ा होते ही वह मानो बस्ती के मकानों एवं निवासियों को हेय दृष्टि से देखने लगा,......उन्हें मुंह चिढ़ाने लगा। आलीशान भवन को देख कर बस्ती वाले उदास हो जाते, 'काश मेरा भी ......।'

गृह प्रवेश के दिन तो उनकी आंखें फटी की फटी रह गयीं। ऐसा विशाल आयोजन, चम-चम करती पोशाकों में लोग....., और उनके बीच वे गंवार, अनपढ़ बेचारे एक कोने में लाइन में बैठे, टुकुर-टुकुर उनका मुंह ताक रहे थे।

मकान के मालिक रहने भी आ गये। पड़ोसी आस-पास रहने वाले, बेचारे उनके सामने पड़ जाते तो झेंपते ....हालांकि ये बड़े प्रेम से मिलते, "कहिए रामलाल जी, क्या हाल है"। जब वे अपनी चमचमाती कार में निकलते, मुहल्ले वालों के अन्दर हीन भावना सी व्याप्त हो जाती।

धीरे-धीरे बस्ती के निवासियों के रहन-सहन, उनके आचार-विचार में एक परिवर्तन आने लगा। कैलाश ने कुछ ही दिनों में एक पुरानी 'मोपेड' जुगाड़ ली और वह भी गर्व से काला चश्मा चढ़ाकर, पाउडर क्रीम लगाकर, कारखाने के लिए निकलता।

रमिया को अब, जब मुहल्ले में ही कहीं जाना होता अपनी 'एकमात्र' बनारसी साड़ी को इस्तिरी करके पहनती....। मुहल्ले की बालाएं जो पहले कमीज-सलवार में, नजरें झुकाए सबकी नजरों से बचते बचाते चलती थीं, अब 'जीन्स' और 'स्कर्ट' पहनती और 'माडर्न' बन कर 'कालेज' जातीं।

उस दिन रमुआ का बेटा... अपने मुंह में एक सस्ती सी सिगरेट दबाए अपने पिता से बोला, "डैड ! इस बस्ती में अब मेरा दम घुटता है और उस पर ये टूटा-फूटा मकान। आस-पास कैसे-कैसे, 'बैकवर्ड' लोग रहते हैं। आज फैसला हो ही जाना चाहिए, या तो मेरा बंबई जाने का इन्तजाम करवा दो या......।"

रमुआ बेचारा आवाक् खड़ा उसका मुंह ताकता रहा।

691-बी, कृष्णा नगर रेलवे कालोनी,
पोस्ट-बशारतपुर, गोरखपुर-273001

पेय जल अपना, सच होता सपना

वेद प्रकाश अरोड़ा

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और भूदान नेता आचार्य विनोबा भावे कहा करते थे कि हवा, पानी, प्रकाश और ज़मीन, ये सब ईश्वरीय देन हैं। इन पर सबका बराबर का हक है। लेकिन आज के ऊंच नीच वाले समाज, विकारों से भरे परिवेश तथा विषमताओं के नज़रिए में हवा और प्रकाश को छोड़ पानी और भूमि पर समान हक जताना एक दुस्वप्न से कम नहीं है। यह भी तब जब पीने का पानी हर इंसान की एक मूलभूत आवश्यकता है। मनुष्य ही क्यों पशु-पक्षी जैसे हर प्राणी और यहां तक कि वनस्पतियों के लिए भी पानी एक बुनियादी ज़रूरत है। आहार के बिना कुछ दिन प्राणी जीवित रह सकता है, लेकिन पानी और हवा के बिना वह जल्दी ही दम तोड़ देता है। कहा भी है "क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा, पंच तत्व यह अधम शरीरा" अर्थात् जल के अलावा, हवा, आग, धरती और गगन से यह शरीर बना है। हवा और पानी के महत्व को देखते हुए ही हवा को प्राण और जल को जीवन कहा गया है, फिर भी आज हवा में मशीनों और कल कारखानों से निकलती कार्बन डायक्साइड और अन्य रसायनों ने इतना जहर घोल दिया है कि हम न केवल सांसों के रास्ते प्रतिदिन तरह-तरह के रोगाणुओं को अंदर खींचते और उनके डेरे बसाते जाते हैं, बल्कि पृथ्वी के कवच ओज़ोन परत में बढ़ती दरार से कैंसर जैसे नए-नए असाध्य रोगों को आमंत्रित कर रहे हैं तथा विश्व के तापमान में कल्पनातीत वृद्धि कर उसे एक गरम कड़ाहे में बदलते जा रहे हैं। कुछ ऐसी ही स्थिति पानी की बनती जा रही है। बेहद गर्मी से न केवल पानी भाप बनकर उड़ जाता है बल्कि शहरों में कारखानों का कचरा और घरों का कूड़ा, नदी नहरों में मिलकर पानी को बुरी तरह प्रदूषित कर रहा है। केन्द्रीय जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण बोर्ड की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रथम श्रेणी के 142 नगरों से हर रोज 70 लाख लीटर से भी अधिक मैला और गंदगी वाला पानी निकलता है। पिछड़े और दूर-दराज के गांवों में मल-प्रवाह और पानी की सफाई के अभाव में तथा पोखरों, तालाबों, कुओं, जोहड़ों, झीलों, नालों तथा जलाशयों के खुले रहने से उनका पानी इतना मटमैला और विषाक्त हो जाता है कि उसे पीने से पेट एक तरह से व्याधिघर बन जाता है। रोगाणुओं और खतरनाक कीड़ों के पेट के अंदर चले जाने से हैजा और आंत्रशोध जैसी जानलेवा बीमारियां पनपने लगती हैं। शहरों में साफ-सुथरा परिशोधित पानी अवश्य मिलता है, लेकिन शुल्क के साथ और राशन की तरह। गर्मियों में तो स्थिति और भी खराब हो जाती है। देश की राजधानी दिल्ली तक के नलों से पानी नदारद हो जाता है। अन्य क्षेत्रों की स्थिति का सहज में ही अंदाज़ा लगाया जा सकता है। आज से कोई पचास वर्ष पहले दिल्ली में लगभग चौबीसों घंटे पानी मिला करता था। बाद में यह क्रमिक रूप से घटते-घटते प्रतिदिन कहीं मुश्किल से एक दो घंटे तो कहीं आधा घंटे के लिए ही मिल पाता है। प्रचंड गर्मी से गांवों में स्थिति और बदतर हो जाती है। कहीं-कहीं कुंओं का पानी बहुत नीचे चला जाता है तो कहीं पानी ही उड़नछू हो जाता है। समस्याग्रस्त गांवों की संख्या निरंतर बढ़ती रहती है। ऐसी स्थिति में लोगों को गंदा पानी पीना पड़ता है। 70 से 80 प्रतिशत रोग विषाणुओं वाले गंदे जल के कारण फैलते हैं। विश्व की लगभग एक अरब 20 करोड़ जनता को शुद्ध पेय जल नसीब नहीं है।

जैसे हमारे शरीर में 65 से 70 प्रतिशत पानी है वैसे ही हमारी पृथ्वी का तीन चौथाई भाग पानी और एक चौथाई जमीन है तो भी इस पानी का एक प्रतिशत ही नदियों, नहरों, झीलों, भूमि के अंदर जलाशयों और वायुमंडलीय नमी से मिलता है। बढ़ते औद्योगिकरण, पसरती आबादी तथा उसी अनुपात से बढ़ते आवासीय क्षेत्रों के कारण पानी की सप्लाई दिनोंदिन कम होते जाने से एक विकट समस्या उत्पन्न होती जा रही है। इतिहास के झुटपुटे तथा सभ्यता के उन्मेषकाल से ही पानी की समस्या से उबरने के लिए, नदियों, झीलों और झरनों के दामन में बस्तियां बसाई गईं। ये बस्तियां पहले नगर बनीं और फिर महानगरों व देशों में परिवर्तित होती चली गयीं। तब पानी साफ कर पीने लायक बनाने के लिए आज की तरह बड़े-बड़े वाटर ट्रीटमेंट प्लांट नहीं थे। फिर भी आज सभ्यता के तेज़ी से आगे बढ़ने के बावजूद विश्व के आधे प्रतिशत से भी कम क्षेत्र में ही साफ सुरक्षित पेय जल उपलब्ध है।

समस्या की विकटता को ध्यान में रखते हुए ही विश्व स्वास्थ्य

संगठन ने सन् 1981 से 1990 तक के दशक को अंतर्राष्ट्रीय पेय जल सप्लाई और स्वच्छता दशक के रूप में मनाने की घोषणा की थी। उद्देश्य यह था कि दशक में सभी को स्वच्छ जल उपलब्ध कराया जाए। इसी घोषणा के अनुसार भारत सरकार ने इस दशक में शहरी और देहाती इलाकों में शत प्रतिशत जल की व्यवस्था करने का संकल्प किया। जहां तक स्वच्छता का संबंध है 80 प्रतिशत शहरों और 25 प्रतिशत गांवों में सफाई का लक्ष्य रखा गया। लेकिन वित्तीय कठिनाइयों के कारण पेयजल की सुविधा का लक्ष्य घटाकर 90 प्रतिशत करना पड़ा। बढ़ती जनसंख्या तथा नदियों के पानी के बंटवारे पर अंतर्राज्यीय विवादों ने भी लक्ष्यों, घोषित कार्य योजनाओं और अधिकारिक आंकड़ों को बदलने पर बाध्य कर दिया। तो भी ग्रामीण पेय जल सप्लाई कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता देते हुए आठवीं योजना में केन्द्रीय सैक्टर के अंतर्गत इस मद की राशि बढ़ाकर 5100 करोड़ रुपये और राज्य सैक्टर के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम की राशि बढ़ाकर 4954 करोड़ 52 लाख रुपये कर दी गई। साथ ही विभिन्न परियोजनाओं को मुस्तैदी और कुशलतापूर्वक लागू करने के लिए ग्रामीण जल सप्लाई विषय, अगस्त 1985 में शहरी विकास मंत्रालय से ग्रामीण विकास विभाग को सौंप दिया गया। ग्रामीण जल सप्लाई राज्य सूची का विषय है लेकिन देहाती इलाकों के लोगों का जीवन-स्तर उठाने के महत्व को देखते हुए ही राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन की कार्रवाईयों के लिए केन्द्रीय सूची में विशाल राशि का प्रावधान किया गया है। वर्तमान वित्त वर्ष के बजट में भी राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल योजना सहित त्वरित ग्रामीण जल पूर्ति कार्यक्रम के लिए राशि 150 करोड़ रुपये अधिक निर्धारित की गई है। इस सबका उद्देश्य न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के द्वारा राज्यों के प्रयत्नों को सम्बल प्रदान करना है। 1986 में आरंभ किए गए 20 सूत्री कार्यक्रम में इसे सातवां सूत्र बनाकर इसके महत्व को उजागर किया गया।

चार चरण

राष्ट्रीय जल आपूर्ति और सफाई कार्यक्रम को 1954 में समाज कल्याण क्षेत्र के अंतर्गत आरंभ किया गया था। राज्यों ने पानी की सप्लाई और सफाई की समस्या के समाधान के लिए क्रमिक रूप से सार्वजनिक स्वास्थ्य इंजीनियरी विभागों का गठन किया। इसके बावजूद छठे दशक के मध्य में यह पाया गया कि ग्रामीण जल सप्लाई परियोजनाएं मुख्य रूप से ऐसे गांवों में ही लागू की गईं, जहां आसानी से पहुंचा जा सकता था और अंदरूनी या दूरदराज के ग्रामीण इलाकों की तरफ ध्यान ही नहीं दिया गया जबकि वहां सुरक्षित पानी नाम की कोई चीज ही नहीं थी। 1947 से 1969 तक की अवधि में गांवों में पानी की सप्लाई के पहले चरण में भूतलीय स्रोतों तथा खुदाई किए हुए कुओं से गांवों को पानी देने का काम किया गया। 1970 से 80 तक के दूसरे चरण में स्रोत विहीन समस्या-ग्रस्त गावों का पता लगाने तथा उनमें ट्यूब वैल तथा हैंड पम्प लगाने का कार्यक्रम तेजी से चलाया गया। समस्या के आकार और स्रोत विहीन समस्या-ग्रस्त गांवों में पानी की सप्लाई की गति तेज करने की आवश्यकता को देखते हुए केन्द्रीय सरकार ने 1972-73 में त्वरित ग्राम जल सप्लाई कार्यक्रम शुरू किया। इसके अंतर्गत समस्या-ग्रस्त गांवों में योजनाएं लागू करने के लिए शत-प्रतिशत सहायता-अनुदान दिया गया। यह कार्यक्रम 1973-74 तक चला। 1974-75 में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत ग्रामीण जल-सप्लाई कार्यक्रम आरंभ करने पर त्वरित ग्रामीण जल सप्लाई कार्यक्रम बंद कर दिया गया। 1977-78 में समस्या-ग्रस्त गांवों को पीने के सुरक्षित पानी की सप्लाई में प्रगति आशा के अनुसार नहीं हुई तो न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत प्रयत्नों को बढ़ावा देने के लिए त्वरित ग्राम जल सप्लाई कार्यक्रम फिर शुरू किया गया। 1980 से 1985 तक का तीसरा चरण संयुक्त राष्ट्र के सम्मेलन के उपरांत शुरू किया और 1985 से चौथा चरण आरंभ किया गया। इस अवधि में पीने के पानी के लिए सम्पुष्ट और सतत रहने वाले साधनों तथा पारंपरिक स्रोतों को सुधारने और उन्हें नया स्वरूप देने के साथ वैज्ञानिक और तकनीकी कार्यविधियों का अधिकतम प्रयोग सुनिश्चित करने और पेय जल की गुणवत्ता सुधारने का फैसला किया गया। इसके लिए 1986 में राष्ट्रीय पेय जल मिशन आरंभ किया गया। टैक्नोलॉजी मिशन के माध्यम से इस कार्यक्रम को गति प्रदान की गई। बाद में सरकार ने राष्ट्रीय पेय जल मिशन को अधिक क्रियाशील और स्पंदनशील बनाने के उद्देश्य से उसका नाम बदल कर राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन रख दिया। इस नए नाम से पहले की सारी योजनाओं को लागू करने का क्रम जारी रखा गया है। जिनका उद्देश्य सम्पूर्ण ग्रामीण आबादी को स्वच्छ पेय जल सप्लाई करना और साथ-साथ ग्रामीण लोगों को गंदे पानी के इस्तेमाल से होने वाली बीमारियों की जानकारी देना है।

चार कार्यक्रम

राष्ट्रीय पेय जल मिशन के अंतर्गत पेय जल की व्यवस्था के

लिए इस समय जिन योजनाओं को मूर्तरूप दिया जा रहा है, वे हैं :

(I) न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, जो राज्यो के क्षेत्र में आता है।

(II) त्वरित ग्रामीण जल सप्लाई कार्यक्रम, जो केन्द्र द्वारा संचालित योजना है।

केन्द्र सरकार ने राज्यों/संघ शासित प्रदेशों को इस बारे में पूरे अधिकार दिए हैं कि वे त्वरित ग्रामीण जल सप्लाई कार्यक्रम और केन्द्र द्वारा प्रायोजित ग्राम सफाई कार्यक्रम के अंतर्गत परियोजनाओं को टैक्नीकल और प्रशासनिक स्वीकृति प्रदान कर सकते हैं। इसी क्षेत्र में कुछ मिशन भी सक्रिय हैं। ये मिशन दो प्रकार के हैं। लघु मिशन और उपमिशन। लघु मिशनों पर 55 जिलों में काम हो रहा है। ये मिशन गांवों में पानी की सप्लाई की दीर्घकालीन तथा जिला आधारित परियोजनाएं हैं। उप-मिशन, राजीव गांधी राष्ट्रीय पेय जल मिशन के ही अधीन विशेष कार्यो के लिए बनाए गए हैं। ये संख्या में पांच हैं और जल में नहरुआ अथवा गिनी कृमियों के उन्मूलन, जहरीली गैसों पर नियंत्रण, पानी में लौह के अधिक अनुपात के निवारण, पानी के खारेपन का निराकरण तथा स्रोतों की वैज्ञानिक खोज और जल संरक्षण का कार्य करते हैं।

मानदंड

गांवों को पेय जल देने के लिए कुछ उद्देश्यों और कुछ मापदंडों का पालन किया जा रहा है जैसे :

1. इन कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 40 लीटर सुरक्षित पेय जल;
2. रेगिस्तानी जिलों में प्रति पशु प्रतिदिन 30 लीटर अतिरिक्त पानी;
3. प्रत्येक ढाई सौ व्यक्तियों के लिए एक हैंडपम्प या स्टैंडपोस्ट तथा
4. मैदानी इलाकों में 1.6 किलोमीटर तथा पर्वतीय क्षेत्र में तो सौ मीटर की ऊंचाई के अंतर पर जलस्रोत की सुनिश्चित व्यवस्था।

क्रियान्वयन के लिए गांवों और क्षेत्रों के चयन में जिन प्राथमिकताओं को अपनाया जाता है, वे हैं :-

(1) 1980 और 1985 की सर्वेक्षण सूचियों में उल्लिखित समस्या-ग्रस्त गांवों में से आठवीं योजना के लिए बच रहे स्रोत विहीन समस्या-ग्रस्त गांवों में पेय जल की सप्लाई।

(2) रसायनों और विषाणुओं से प्रदूषित पेय जल वाले सभी गांवों में शुद्ध जल की आपूर्ति।

(3) प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 40 लीटर से कम की सप्लाई वाले सभी गांवों और बस्तियों में पूरी मात्रा में सुरक्षित पेय जल की व्यवस्था।

मुख्य विशेषताएं

(1) पानी के अभाव की भीषण समस्या वाले गांवों अथवा बस्तियों में पेय जल पहुंचाने के काम को प्राथमिकता दी जानी है।

(2) केन्द्रीय सरकार के कोष का कम से कम 25 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारित किया गया है।

(3) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के आवासीय क्षेत्रों के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता दी जाती है।

पानी की स्वच्छता और गुणवत्ता में कोई कमी न आने देने के लिए आठवीं योजना के दौरान हर जिले में कम से कम एक प्रयोगशाला खोलने का कार्यक्रम है। अभी तक 118 प्रयोगशालाएं कायम हो चुकी हैं और उनमें काम भी होने लगा है। इसके अलावा विभिन्न राज्यों में 18 चलती फिरती प्रयोगशालाएं भी पानी की जांच परख करती हैं।

साफ पानी और योजनाएं

छठी योजना के आरंभ तक लगभग 94 हजार समस्या-ग्रस्त गांवों में पीने का पानी पहुंचाया जा चुका था। एक अप्रैल 1980 तक लगभग दो लाख 31 हजार गांवों में पेय जल पहुंचाया जा चुका था। एक अप्रैल 1980 तक लगभग दो लाख 31 हजार गांवों में पेय जल पहुंचाना बाकी रह गया था। इनमें से एक लाख 92 हजार गांवों में छठी योजना के दौरान पीने के पानी की सप्लाई कर दी गई। तब यह सर्वेक्षण किया गया कि अब कितने गांव समस्या प्रधान रह गए हैं। सर्वेक्षण से पता चला कि एक लाख 62 हजार गांवों में पीने के पानी की कोई व्यवस्था नहीं हो पाई। इनमें पेय जल का प्रबंध सातवीं योजना के दौरान करने का कार्यक्रम बनाया गया। 1993-94 में बिना स्रोत वाले मात्र 725 समस्या-ग्रस्त ग्राम रह गए थे। अन्य सभी समस्या-ग्रस्त गांवों में पानी के स्रोत की पूर्णतया या आंशिक व्यवस्था कर दी गई थी। बच रहे 725 समस्या-ग्रस्त गांवों को छोड़ 1992-93 तक ही देश

के कुल 5,83,003 गांवों में कम से कम एक सुरक्षित स्रोत की व्यवस्था कर दी गई। इस वर्ष शेष 725 समस्या ग्रस्त गांवों में भी एक या अधिक पक्का पुख्ता जल स्रोत का इंतजाम किया जा रहा है। इस तरह स्वाधीनता दिवस पर की गई प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव की इस घोषणा को मूर्तरूप दे दिया जायेगा कि आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रत्येक गांव/बस्ती में पीने का साफ सुरक्षित पानी देने का जुगाड़ कर दिया जायेगा। इस काम में तेजी लाने के लिए पंचायतों, स्वयंसेवी संगठनों, विशेषज्ञों, मध्य प्रदेश के रायसेन जिले के चमत्कारी बाबा या फिर राजस्थान के पानी बाबा जैसे लोगों तथा स्थानीय जनता का सहयोग प्राप्त करना होगा।

कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि अगर वर्षा का दस प्रतिशत पानी भी जमा कर लिया जाए और उसका सुचारु वितरण तथा प्रबंधन किया जाए तो पीने के पानी की समस्या का टिकाऊ समाधान किया जा सकता है। हमारी नदियों में एक अरब चालीस करोड़ एकड़ फुट पानी का प्रवाह होता है। इसका अस्सी प्रतिशत मानसून से और बाकी पहाड़ों पर बर्फ पिघलने से मिलता है। उस पानी में से लगभग चालीस करोड़ एकड़ फुट पानी का सिंचाई आदि विभिन्न कार्यों के लिए प्रयोग किया जाता है और मात्र तीन करोड़ एकड़ फुट पानी को ही जमा किया जाता है, जो कुल पानी के अड़तालीसवें हिस्से के बराबर है। बाकी नब्बे करोड़ से एक अरब एकड़ फुट पानी तेज धार या विनाशकारी बाढ़ की शक्ल में बहता हुआ समुद्र में जा गिरता है। अगर देश की नदियों को संपर्क नहरों से परस्पर जोड़ दिया जाए, गंगा से कावेरी को मिलाकर एक जल श्रृंखला बना दी जाए अथवा पानी का हार भारत मा को पहना दिया जाए तो बाढ़ और सूखे के दोहरे प्रकोप से छुटकारा पाने के साथ-साथ दूरदराज तक के बीहड़ इलाकों को भी पीने का पानी सुलभ कराया जा सकता है।

अगर इस जलमाला का उपयोग छोटी-बड़ी नदी घाटी परियोजनाओं में सिंचाई और बिजली के साथ-साथ पेयजल की सप्लाई के लिए भी किया जाए तो देश एकबारगी तीनों अभिशापों से मुक्त हो जाएगा। अगर देश के तीनों ओर समुद्र के खारे पानी की अपार राशि को भी पीने के पानी के योग्य बना दिया जाए तो यह बीसवीं शताब्दी का समुद्र मंथन होगा और देश को पानी की कमी के सिरदर्द से हमेशा के लिए छुटकारा मिल जाएगा।

268, सत्यनिकेतन, मोती बाग,
नानकपुरा, नई दिल्ली-110021

जवाहर रोजगार योजना के तहत एक अरब से ज्यादा दिहाड़ियों के रोजगार का सृजन

जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत 1993-94 के दौरान कुल मिलाकर एक अरब से अधिक दिहाड़ियों के बराबर रोजगार का सृजन किया गया।

जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत पिछले चार वर्षों के दौरान 353.20 करोड़ से अधिक दिहाड़ियों के बराबर रोजगार का सृजन किया जा चुका है। 1994-95 में इस योजना के लिए 3,855 करोड़ रुपये की राशि रखी गई है जबकि आठवीं योजना के लिए 18,400 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

जवाहर रोजगार योजना का प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार और कम रोजगार प्राप्त स्त्री-पुरुषों को रोजगार के और अवसर दिलाना है। इसके अतिरिक्त गांवों में उपलब्ध आर्थिक बुनियादी सुविधाओं को सुदृढ़ करना, स्थायी रोजगार के अवसर जुटाना, सामुदायिक और सामाजिक परिसंपत्तियों का निर्माण करना और ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों के जीवन स्तर में व्यापक सुधार लाना इसके अन्य उद्देश्य हैं।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण करते हुए उपयोग कीजिए

डी. के. पाण्डेय
वन पारिस्थितिकीय एवं पर्यावरण विभाग,
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

पारिस्थितिकीय असन्तुलन और प्रदूषण आज विश्वव्यापी विकट समस्या बन गया है। इसका जैसे-जैसे फैलाव हो रहा है, वैसे ही जगह-जगह सेमिनारों, संगोष्ठियों, सम्मेलनों और अन्य प्रचार-प्रसार माध्यमों द्वारा विश्व जनमत को जागरूक बनाने के प्रयास हो रहे हैं। इन समस्त कार्यों में आज अपार धन खर्च किया जा रहा है। वैज्ञानिक वर्ग जहां एक तरफ प्रदूषण की रोकथाम और पारिस्थितिकीय संतुलन को और विघटित होने से बचाने के लिए नई-नई तकनीकों, विधियों आदि के अनुसंधान और विकास में लगे हुए हैं, वहीं दूसरी ओर छोटे-छोटे दलों में कुछ सामाजिक कार्यकर्त्ता प्रदूषण तथा उसके प्रभाव आदि जानकारियों के प्रसार में लगे हुए हैं। प्रश्न है कि यह समस्या उत्पन्न कैसे हुई, किसने की और यह दिन-प्रतिदिन और अधिक विकट क्यों होती जा रही है।

मनुष्य ने जब कभी प्राकृतिक सन्तुलन में अनावश्यक व्यवधान उत्पन्न किया, उनका अनुचित शोषण किया, उससे नई-नई समस्याओं का ही जन्म हुआ। मानव ने कई प्रकार से प्राकृतिक सम्पदा का दोहन किया जैसे—अवैज्ञानिक औद्योगिकरण, वनों का अन्धाधुन्ध विनाश, नदियों के प्रवाह को बदलना, समुद्र के भू-क्षेत्र में विस्तार, औद्योगिक और शहरी गन्दे पदार्थों का उत्सर्जन प्राकृतिक जल सम्पदा और खाली भूमियों में करना, ताप विद्युत गृह द्वारा निष्कासित धुएं से वायु का दूषित होना, रेडियोधर्मी अपशिष्टों तथा परमाणु विस्फोटों से वायुमण्डल का दूषित होना, यातायात के संसाधनों में अपार वृद्धि होना तथा जनसंख्या का दिन प्रतिदिन प्राकृतिक सम्पदा के ऊपर भार बढ़ाना आदि। कृषि पर लगातार जनसंख्या वृद्धि के कारण दबाव बढ़ता जा रहा है। देश में कुल कृषियोग्य भूमि 16 करोड़ 60 लाख हेक्टेयर है, जिसमें से 14 करोड़ 10 लाख हेक्टेयर भूमि पर खेती की जाती है। भोजन, चारा, फाइबर, ईंधन और बढ़ता शहरीकरण तथा औद्योगिकरण, भूमि संसाधनों पर लगातर दबाव डाल रहे हैं। जनसंख्या में 1981 से 1991 के बीच 23.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसका असर भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता पर पड़ता है जो तेजी से कम हो रही है। अनुमान है कि सन् 2005 तक प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता कम होते-होते 0.31 हेक्टेयर रह जाएगी, जबकि 1950 में यह 0.89 हेक्टेयर थी। भूमि की उपलब्धता जैसे-जैसे घट रही है मनुष्य वनों को नष्ट करके खेती और आवास योग्य भूमि में विस्तार कर रहा है। इस समय देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का मात्र 11 प्रतिशत वन-क्षेत्र रह गया है। आज इन्हीं कारणों से वायु, जल और ध्वनि प्रदूषण का स्तर उस सीमा तक पहुंच गया है, जिसके कारण पारिस्थितिकीय संतुलन बिगड़ गया है। आज जहां एक तरफ नई-नई दवाइयों और वैज्ञानिक अनुसंधानों के कारण चिकित्सा पद्धति में एक ओर असाध्य रोग साध्य हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर प्राकृतिक असंतुलन तथा प्रदूषण के कारण नए-नए रोगों का जन्म हो रहा है। सोचने की बात यह है कि ऐसा क्यों हो रहा है?

आज से बहुत साल पहले न्यूटन नाम के वैज्ञानिक ने एक सिद्धान्त प्रतिपादित किया था "प्रत्येक क्रिया के विपरीत एक प्रतिक्रिया होती है।" आज यही सिद्धान्त हमें अपने चारों ओर, यहां तक कि सम्पूर्ण विश्व में देखने को मिल रहा है। प्रकृति की सहनशीलता अब हमारे अविवेकपूर्ण व्यवहार को सहन नहीं कर पा रही है जिसका परिणाम हम लोगों के सामने पारिस्थितिकीय विकृतियों और पर्यावरण प्रदूषण के रूप में आ रहा है। मनुष्य की प्रथम आवश्यकता है हवा। उसके बाद जल और अन्ततः भोजन, कपड़े और आवास आदि की। लेकिन हमने अवैज्ञानिक तथा अविवेकपूर्ण ढंग से प्राकृतिक सम्पदा का इस सीमा तक शोषण कर लिया है कि आज हमारी प्रथम आवश्यकता वायु ही प्रदूषित हो गई है। कहने का अभिप्राय यह है कि जब हम प्रदूषित वातावरण में रहेंगे, उसमें सांस लेंगे तो उसका प्रभाव हमारे ऊपर पड़ेगा ही। हम सभी के धर्म यही कहते हैं कि मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए शुद्ध वायु, स्वच्छ जल और भोजन की आवश्यकता होती है। आज प्राकृतिक असंतुलन तथा कृषि में अन्धाधुन्ध रसायनों के प्रयोग के फलस्वरूप इसमें से कोई भी वस्तु स्वच्छ नहीं है। ऐसे में हमारा जीवन कितने दिन सम्भव है? आज का बच्चा जैसे ही माता के गर्भ से जन्म लेता है उसे सबसे पहले इसी दूषित वायु को ग्रहण करना पड़ता है। इसमें बच्चे का तो कोई दोष नहीं है, दोष हमारा और आपका है। हम लोग उन लोगों में से हैं जिन्होंने आने वाली पीढ़ियों के लिए आवश्यक पंच तत्वों

(शेष पृष्ठ 38 पर)

मादक पदार्थों का भयावह संकट

✍ राजेन्द्र उपाध्याय

नशीले पदार्थों के दुरुपयोग से व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र को होने वाले नुकसान के बारे में मनुष्य सदियों से जानता है। लेकिन आज के युग में यह समस्या समूची मानवजाति के लिए बहुत बड़े खतरे के रूप में सामने आयी है। शराब, अफीम, चरस आदि अनेक ऐसे नशीले पदार्थ हैं जिनके दुरुपयोग का उल्लेख बहुत पुराने समय से मिलता है। हर युग में समाज को इनके खतरे से बचाने के लिए उपाय भी किये जाते रहे हैं। सभी समाजों में नशीले पदार्थों का गलत इस्तेमाल नैतिक दृष्टि से अनुचित माना जाता है। कानून में भी इसका निषेध है।

आजकल जिन मादक पदार्थों का उपयोग गैर कानूनी माना जाता है उनमें हशीश, भांग, गांजा हेरोइन, अफीम मारीजुआना, स्मैक, एल.एस.डी., ब्राऊन शूगर और कोकीन प्रमुख हैं। ये चीजें सिर्फ नशा ही नहीं करती, बल्कि ये इस्तेमाल करने वाले के स्वास्थ्य को भी तबाह कर देती हैं। इनके चंगुल में फंसा व्यक्ति अपना स्वास्थ्य और धन तो खोता ही है उसकी भले-बुरे में फर्क करने की क्षमता भी समाप्त हो जाती है। वह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से पराश्रित हो जाता है। परिवार और समाज से उसका अलगाव शुरू हो जाता है। नशीले पदार्थों के असर से उसका शरीर खोखला हो जाता है और बीमारियों का उस पर बहुत जल्दी असर होता है।

नशे का आदी व्यक्ति बड़ी आसानी से पहचाना जा सकता है। उसकी याददाश्त बहुत कमजोर हो जाती है और उसकी बातें अक्सर भ्रामक होती हैं। उसमें चिड़चिड़ापन आ जाता है। वह यह मानने को कभी तैयार नहीं होता कि उसे नशे की लत है। पढ़ने-लिखने, खेलकूद, सामाजिक कार्यों से वह जी चुराने लगता है। इसके अलावा बार-बार खांसी और उल्टी आना, शरीर में दर्द रहना, आंखों का उभर कर बाहर आ जाना, सुस्ती, लड़खड़ाना, हकलाना, भूख का अचानक कम होना नशाखोरों के शारीरिक लक्षण हैं।

हमारे संविधान निर्माताओं को मादक पदार्थों से होने वाले खतरों का पूरा अहसास था इसीलिए उन्होंने संविधान के 47वें अनुच्छेद में नशीले पदार्थों के औषधि के रूप में इस्तेमाल के अलावा अन्य किसी भी तरह के उपयोग पर रोक लगाने की बात स्पष्ट शब्दों में कही है।

मादक पदार्थों के उपयोग की रोकथाम की संवैधानिक जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है लेकिन इस कार्य में केन्द्र की भूमिका कोई कम नहीं है। नशीले पदार्थों का अवैध व्यापार एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन गया है। इस तरह का गैर कानूनी धंधा करने वाले गिरोह काफी ताकतवर हैं। कई देशों में तो इस तरह के गिरोहों का सरकार पर बहुत दबाव भी है। नशीले पदार्थों के धंधे की आड़ में आतंकवाद, हथियारों की तस्करी आदि अनेक अपराधों को बढ़ावा मिल रहा है। भारत में पंजाब और जम्मू कश्मीर में आतंकवादियों और मादक पदार्थों के तस्करों के बीच सांठ-गांठ का तो भंडाफोड़ हो ही चुका है। महाराष्ट्र, गुजरात आदि राज्यों में भी इन तस्करों के अपराध की दुनिया से संबंध किसी से छिपे नहीं है। मादक पदार्थों की समस्या के अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को ध्यान में रखते हुए इसके समाधान में केन्द्र सरकार की भूमिका काफी बढ़ जाती है।

मादक पदार्थों की समस्या का एक अत्यंत चिंताजनक पहलू हाल में सामने आया है। मनुष्य जाति के अस्तित्व के लिए एड्स रोग ने आज संकट पैदा कर दिया है। उसका संक्रमण मादक पदार्थों का सेवन करने वाले लोगों में सबसे अधिक होता है। यह जानलेवा बीमारी जिस तरह से फैल रही है उसके पीछे एक प्रमुख कारण मादक पदार्थों की लत का बढ़ना भी है। इस तरह अपराधियों, नशाखोरों और तस्करों की मिलीभगत से समाज के सामने जो गंभीर खतरा पैदा हो गया है उससे निपटने के लिए कई स्तरों पर संगठित अभियान जरूरी है। इस कार्य में केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच तालमेल के साथ-साथ दुनिया के अन्य देशों का सहयोग भी बहुत जरूरी है।

केन्द्र सरकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस समस्या से निपटने के प्रति पूरी तरह जागरूक है। मादक द्रव्यों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को रोकने के लिए अन्य देशों के साथ सहयोग जरूरी है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारत ने दुनिया के कई देशों के साथ मादक पदार्थों के अवैध व्यापार की रोकथाम में सहयोग करने के समझौते किये हैं। दरअसल नशीले पदार्थों के व्यापार को आजकल एक हथियार के रूप में इस्तेमाल में लाया जा रहा है। यह एक ऐसा हथियार है जिसका समाज पर बहुत ही बुरा असर पड़ता है। जहां सामान्य हथियारों से सिर्फ जान माल की क्षति होती है वहीं किसी देश के लोगों में नशीले पदार्थों की लत फैलाकर

उसके नागरिकों के वर्तमान और भविष्य सभी कुछ को नष्ट किया जा सकता है। हमें इस तरह के खतरों से सावधान रहना होगा।

हालांकि केन्द्र सरकार के स्तर पर मादक पदार्थों की रोकथाम के प्रयास कोई नये नहीं हैं, लेकिन 1985-86 में यह महसूस किया गया कि समस्या का समाधान अलग-अलग पहलुओं पर अलग-अलग कार्रवाई करने से नहीं होगा इसके लिए समन्वित नीति अपनानी आवश्यक होगी। वस्तुतः इस समस्या के समाधान के लिए सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और चिकित्सकीय पहलुओं पर एक साथ कार्य करना जरूरी है। एक ओर जहां ऐसे उपाय करने जरूरी हैं जिनसे नशीली वस्तुओं की मांग ही पैदा न हो, वहीं दूसरी ओर इनके अवैध व्यापार की रोकथाम आवश्यक है। मांग को तभी समाप्त किया जा सकता है जब समाज में मादक पदार्थों के खतरों के बारे में जागरूकता हो। अगर लोग खुद ही यह बात समझ जाएं कि मादक द्रव्य उनके सबसे बड़े दुश्मन हैं तो शायद यह समस्या ही उत्पन्न न हो। यही नहीं इस तरह की समझ जगाकर नशे के आदी लोगों को भी नशे की लत से मुक्ति दिलायी जा सकती है।

समस्या के समाधान से जुड़ी एक महत्वपूर्ण बात यह है कि नशा करने वालों के साथ मानवीय दृष्टिकोण अपनाना बहुत जरूरी है। यह सही है कि नशा करना नैतिक और सामाजिक दृष्टि से अच्छी बात नहीं है, लेकिन मादक द्रव्यों के कुचक्र में फंसे लोगों को अपराधी नहीं माना जाना चाहिए बल्कि रोगी की तरह उनकी पूरी देखभाल की जानी चाहिए और उन्हें मनोवैज्ञानिक सहारा मिलते रहना चाहिए। अक्सर देखा गया है लोग परिवार और समाज में अपने आपको उपेक्षित महसूस करने की वजह से नशे के जाल में फंसते हैं। इसलिए ऐसा माहौल बनाया जाना चाहिए जिसमें व्यक्ति को इस तरह की हताशा से बचाया जा सके।

नशे के आदी लोगों को नशे से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें सलाह देने तथा उनके उपचार के साथ-साथ ऐसी पक्की व्यवस्था भी होनी चाहिए जिससे वे फिर से इस जाल में न फंसने पाएं।

नशे से मुक्ति पा चुके लोगों के सामाजिक पुनर्वास की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है।

भारत में मादक पदार्थों की मांग और आपूर्ति को कम करने की जिम्मेदारी मादक द्रव्य नियंत्रण ब्यूरो तथा पुलिस निभा रही है। दूसरी ओर कल्याण मंत्रालय मादक पदार्थों के खतरों के बारे मे समाज में जागरूकता बढ़ाने और नशे के आदी लोगों के उपचार तथा पुनर्वास का काम देख रहा है। स्वयंसेवी संगठनों ने भी इस कार्य में अच्छा सहयोग किया है। केन्द्रीय सरकार मादक पदार्थों के दुरुपयोग को रोकने और नशा मुक्ति के कार्य में सहयोग करने वाले स्वयंसेवी संगठनों को कुछ विशेष कार्यक्रमों के लिए 90 प्रतिशत तक अनुदान देती है। इन कार्यक्रमों में नशे के आदी लोगों का पता लगाने, उन्हें नशे से मुक्ति दिलाने के लिए सलाह देने, उनके उपचार जैसे कार्य शामिल हैं। इसके अलावा समाज में नशाखोरी के खतरों के बारे में जागरूकता बढ़ाने तथा नशे की आदत से मुक्त किये गये लोगों के पुनर्वास के लिए भी स्वयंसेवी संगठनों को मदद दी जाती है।

हालांकि नशीले पदार्थों की समस्या का शहरी या ग्रामीण क्षेत्र से कोई सीधा संबधं नहीं है। किसी भी इलाके में इसका प्रकोप हो सकता है लेकिन भारत में नशीले पदार्थों का दुरूपयोग अभी शहरी इलाकों में ज्यादा है। इन पदार्थों का अवैध व्यापार करने वालों की गतिविधियां अभी शहरों में अधिक हैं, क्योंकि वहां उन्हें भीड़भाड़ में पहचान में आए बिना काम करने में कोई परेशानी नहीं होती। लेकिन गांवों में इसका फैलाव होने की आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता। भारत के पूर्वोत्तर राज्यों से जो सूचनाएं मिली हैं उनके अनुसार इस क्षेत्र के राज्यों में मादक पदार्थों की आदत बड़ी तेजी से बढ़ रही है। यही नहीं इन राज्यों में एड्स बीमारी के रोगियों की संख्या में भी बहुत वृद्धि हुई है जो यहां के लोगों में नशीले पदार्थों की लत के बढ़ने का एक स्पष्ट संकेत है। इसलिए मादक पदार्थों की समस्या के सामधान का कोई भी कार्यक्रम बनाते समय शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों तथा दूर-दराज के इलाकों, सभी का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया गया तो नशे के सौदागर एक जगह को छोड़कर दूसरी जगह अपना जाल फैला सकते हैं।

जहां तक शहरी क्षेत्रों में नशीले पदार्थों की समस्या का सवाल है वहां इसका प्रकोप बढ़ा है। लेकिन इसकी रोकथाम के प्रयास भी तेज हुए हैं। इस कार्य में अनेक स्वयंसेवी संगठन मदद को आगे आये हैं। देश भर में करीब 180 स्वयंसेवी संस्थाएं मादक द्रव्यों की रोकथाम के कार्यक्रमों में सहयोग कर रही हैं। इनकी गतिविधियों में नशे की लत के शिकार लोगों के लिए परामर्श केन्द्रों और नशा मुक्ति केन्द्रों के संचालन के साथ-साथ नशे से मुक्त हुए लोगों की देखरेख के केन्द्रों का संचालन भी शामिल है। ये देखरेख केन्द्र बड़े महत्वपूर्ण हैं क्योंकि नशे से मुक्ति पाने के बाद रोगियों की देखभाल नहीं की जाए तो उनके फिर से लत पड़ने का खतरा बना रहता है। देखरेख केन्द्रों में करीब 3 से 6 महीने तक नशे से मुक्त हुए लोगों को रखा जाता है और रचनात्मक कार्यों में लगाकर उनके पुनर्वास के प्रयास भी किये जाते हैं। इसके अलावा छोटे शहरों, कस्बों आदि में स्वयंसेवी संगठनों द्वारा

नशामुक्ति शिविर भी आयोजित किये जाते हैं। नशे की आदत के प्रसार को रोकने के कार्य में भी स्वयंसेवी संगठन अच्छा कार्य कर रहे हैं। विचार गोष्ठियों, सम्मेलनों, प्रतियोगिताओं आदि के माध्यम से बच्चों और युवाओं को नशाखोरी के खतरों से आगाह किया जाता है।

इस समय देश भर में नशामुक्ति के लिए 271 केन्द्र कार्य कर रहे हैं। इनमें से 152 परामर्श केन्द्र ऐसे हैं जिनमें नशे के शिकार लोगों को इससे बचने के लिए सलाह दी जाती है और प्रेरित किया जाता है। 109 केन्द्रों में नशे की लत छुड़ाने का कार्य किया जाता है। इसके अलावा 15 केन्द्र नशे से मुक्त लोगों की देखरेख करते हैं। यहां यह बताना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि नशामुक्ति केन्द्रों की संख्या में हाल के वर्षों में तेजी से वृद्धि हुई है। दरअसल इस तरह के केन्द्रों की शुरूआत 1985-86 में आठ केन्द्रों से हुई थी जो अब बढ़कर 271 हो गये हैं। बड़ी संख्या में नशे के शिकार लोग इनमें उपचार के लिए आ रहे हैं। पिछले साल नशामुक्ति केन्द्रों में 1 लाख 46 हजार से अधिक लोगों को पंजीकृत किया गया। इनमें से 44,800 से अधिक को नशे की लत से छुटकारा दिलाने में सफलता मिली।

सरकार ने नशाखोरी की समस्या की गंभीरता को ध्यान में रखकर इसके निवारण के प्रयासों के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध करायी है। पिछले वर्ष इस कार्य के लिए 13 करोड़ 80 लाख रुपये दिये गये।

पिछले अनुभवों के आधार पर आठवीं योजना में मादक पदार्थों की समस्या से निपटने के कार्यों की समीक्षा की जा रही है और नये तौर तरीके निर्धारित किए जा रहे हैं। इसके अंतर्गत जहां एक ओर क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम बनाए जा रहे हैं, वहीं नशे के शिकार व्यक्तियों के लिए परामर्श, नशामुक्ति तथा देखरेख की समन्वित योजना बनाने का प्रस्ताव है।

कल्याण मंत्रालय विभिन्न कार्यक्रमों पर पूरी निगाह रखता, है ताकि इसमें आ रही बाधाओं को समय पर दूर किया जा सके।

लोगों में मादक पदार्थों के सेवन के दुष्परिणामों के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए अनेक कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। इसमें रेडियो और टेलीवीजन सहित विभिन्न प्रचार माध्यमों का सहयोग भी लिया जा रहा है। मादक पदार्थों के अवैध व्यापार तथा इनके दुरुपयोग को रोकने के लिए हर वर्ष 26 जून को अंतर्राष्ट्रीय मादक पदार्थ दुरुपयोग निवारण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

इन सब प्रयासों के बावजूद मादक पदार्थों से उत्पन्न संकट की गंभीरता बनी हुई है। दरअसल यह समस्या समूची मानवजाति के अस्तित्व के लिए एक गंभीर संकट है। अगर समय रहते हम इसके खतरे से आगाह नहीं हुए तो यह न सिर्फ व्यक्ति और परिवार को बल्कि समूचे समाज, राष्ट्र और मानव जाति को छिन्न-भिन्न करके रख देगी।

बी-1/1388
वसंत कुंज, नई दिल्ली-70

(पृष्ठ 35 का शेष)

(वायु, जल, धरती, आकाश, अग्नि) को प्रदूषित कर दिया है। अभी भी समय है सोचने, समझने तथा कुछ करने के लिए। हमें भावी पीढ़ियों के लिए निश्चित रूप से कुछ करना चाहिए।

विकासशील और पिछड़े राष्ट्रों के आर्थिक जीवन में प्राकृतिक सम्पदा महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अतः उत्पादन की कोई ऐसी व्यवस्था ही उपयुक्त होगी जो कि प्राकृतिक सम्पदा के संरक्षण और विकास को प्रोत्साहित करती हो। इसके लिए हमें निम्न श्लोक से प्रेरणा लेनी चाहिए—

"रक्षेय प्रकृति पातुलोका"

इसका अर्थ है, "अरे विश्व के लोगो, प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण करते हुए उसका उपयोग करो, क्योंकि प्राकृतिक सम्पदा सीमित है।" हमें प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखने के लिए अधिक से अधिक वृक्ष लगाने चाहिए। वृक्ष वातावरण में मौजूद कुछ गैसों को अपने अन्दर लेकर हमें शुद्ध वायु प्रदान करने के साथ ही वातावरण को स्वच्छ तथा हरा-भरा रखते हैं।

वृक्ष अनेक प्रकार से लाभकारी होने के अलावा प्राकृतिक सन्तुलन को भी बनाये रखते हैं। हमें ऐसे परोपकारी वृक्षों को अत्यधिक संख्या में लगाना चाहिए। साथ ही हमें प्राकृतिक सम्पदा का संरक्षण करते हुए उसका उचित मात्रा में उपयोग करना चाहिए। जब तक यह पृथ्वी हरी-भरी है तभी तक पृथ्वी पर जीवन सम्भव है। इसलिए अपने लिए और आने वाली पीढ़ियों के लिए हमें इस पृथ्वी को हरा-भरा रखना न केवल हमारा कर्तव्य है बल्कि धर्म भी है।

पर्वतीय क्षेत्रों में बेमौसमी सब्जी उत्पादन

✍ मोहन चन्द्र पाण्डे
प्रवक्ता, वाणिज्य विभाग, राजकीय महाविद्यालय,
लोहाघाट, पिथोरागढ़

मध्यवर्ती हिमालय क्षेत्र में स्थित उत्तराखंड जहां राजनैतिक रूप से अपनी अलग पहचान बनाने के लिये प्रयासरत है, वहीं आर्थिक उन्नयन के लिये भी संघर्षशील है। उत्तर प्रदेश के कुमाऊं तथा गढ़वाल मंडलों के आठ जनपदों के विस्तार से बने इस क्षेत्र में अधिकांश भाग पर्वतीय है। पहाड़ी भूमि, सीढ़ीदार तथा ढालू खेतों में प्रति हेक्टेयर कृषि उपज काफी कम है। बड़े पैमाने पर कृषि न होने के कारण इस पर लागत भी अधिक आती है। लगभग 86 प्रतिशत कृषक यहां लघु और सीमान्त कृषकों की श्रेणी में आते हैं। मशीनीकरण के लाभ उपलब्ध नहीं हो पाने से यहां कृषि एक कष्टप्रद कार्य है। उत्पादकता में कमी के कारण कृषि क्षेत्र लाभदायक कार्य नहीं है किंतु व्यवसाय और उद्योगों के विकास के अभाव में यहां का कृषक छोटे-छोटे सीढ़ीनुमा असिंचित खेतों में ही परम्परागत कृषि द्वारा जीवन-यापन करने को विवश है।

जनसंख्या वृद्धि और उपभोक्ता संस्कृति के विकास के साथ पर्वतीय क्षेत्र के कृषकों को अब कृषि भार लगने लगी है। मैदानी नगरों की ओर पलायन की प्रवृत्ति इन क्षेत्रों में तेजी से बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास यहां की परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाए। वस्तुतः पर्वतीय कृषि उस क्षेत्र की समुद्र तल से ऊंचाई, हिमालय से दूरी तथा ढाल की दिशा को ध्यान में रखकर वैज्ञानिक ढंग से की जानी चाहिये। इन परिस्थितियों में अन्न उत्पादन के अतिरिक्त दलहन व तिलहन का उत्पादन, फलोत्पादन तथा बेमौसमी सब्जी उत्पादन आय बढ़ाने के बेहतर विकल्प के रूप में प्रचलित हो रहे हैं।

मैदानी क्षेत्रों में जो सब्जियां अक्टूबर के बाद बाजार में आती हैं, पर्वतीय क्षेत्रों में ठंडी जलवायु होने के कारण वे सब्जियां अगस्त से ही तैयार हो जाती हैं। इन सब्जियों को मैदानी क्षेत्रों में बेचकर भारी लाभ कमाया जा सकता है। मटर, टमाटर, गोभी, शिमला मिर्च, कद्दू (मैरो), बैंगन, फ्रेंचबीन, मूली आदि की बेमौसमी कृषि पर्वतीय क्षेत्रों में काफी लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

बेमौसमी सब्जी उत्पादन में मटर का प्रमुख स्थान है। डेढ़ हजार मीटर के लगभग ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में उत्तरी ढाल वाली भूमि में बेमौसमी मटर का उत्पादन काफी सफल है। वर्ष में इसकी दो फसलें ली जा सकती हैं। पहली फसल अगस्त से अक्टूबर के मध्य तथा दूसरी जनवरी से अप्रैल के मध्य। मैदानी क्षेत्रों में मटर की फसल अक्टूबर के बाद आती है। इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र की फसलों के दोनों समय ऐसे हैं जबकि मैदानी क्षेत्रों में मटर की पैदावार बिल्कुल भी नहीं होती है। उन दिनों में पर्वतीय क्षेत्र की मटर बहुत ऊंचे मूल्यों पर बिकती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में भूमिधारिता अत्यन्त कम होने के कारण बड़े स्तर पर उत्पादन संभव नहीं हो पाता है, फिर भी इकाई माप के आधार पर एक हेक्टेयर भूमि में खाद, बीज, कीटनाशक तथा व्याधिनाशक के रूप में लगभग 4000 रुपये का निवेश करना पड़ता है। भूमि की तैयारी में औसतन 250 मानव दिवस पर लगभग 7500 रुपये का व्यय माना जा सकता है। देखभाल तथा संरक्षण (स्टेकिंग आदि) पर किसान प्रायः निजी श्रम करता है। इस निवेश और श्रम के प्रतिफल स्वरूप उसे 200 क्विंटल या उससे अधिक फसल प्राप्त होती है। मैदानी बाजारों में बेमौसमी मटर का भाव 20 रुपये प्रति किलोग्राम के आसपास रहता है। इस प्रकार किसान अपनी फसल पर 4 लाख रुपये के लगभग प्राप्त कर सकता है जबकि उसे उपरोक्त के अतिरिक्त मात्र फसल को तोड़ने तथा परिवहन के व्यय ही करने होते हैं। छोटे किसान भी मटर उत्पादन से प्रतिनाली 6000 रुपये से अधिक कमा सकते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि बेमौसमी सब्जियों का उत्पादन करके पर्वतीय क्षेत्रों के कृषक जहां अपने क्षेत्र की विशेष जलवायु का लाभ लेते हुए भूमि का कुशलतम उपयोग कर सकते हैं वहीं अपनी आर्थिक स्थिति का विकास करते हुए जीवन स्तर को बेहतर बना सकते हैं। इससे पहाड़ों से मैदानी शहरों की ओर पलायन, बेरोजगारी तथा अभाव की समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष करने में भी सफलता मिलेगी।

अपना गांव, अपना काम

परमेश चन्द्र
विशिष्ट योजना सचिव,
विशिष्ट योजनाएं एवं एकीकृत ग्रामीण विकास विभाग,
सचिवालय, जयपुर

राजस्थान के दूर दराज इलाके के गांव ढाणी को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के उद्देश्य से "अपना गांव - अपना काम" योजना को राज्य में पहली जनवरी, 1990 को शुरू किया गया। इस योजना के तहत राज्य के ग्रामीण अंचलों में जन सुविधाओं का निर्माण, रोजगार के अतिरिक्त अवसर और स्वावलम्बन के संसाधन उपलब्ध कराकर सार्वजनिक परिसम्पत्तियों का निर्माण किया जाता है।

इस योजना से ऐसा विकास संभव हुआ है जिसमें स्थानीय समुदाय की क्षमता और स्वावलंबन में वृद्धि हुई है और विकास कार्यों में जनता और सरकार की भागीदारी बढ़ी है। योजना के तहत राज्य में कई स्थानों पर स्थानीय जन समुदाय के सहयोग से स्कूल, औषधालय के भवन, पेयजल के कूप आदि निर्मित कराये जाते हैं। इसमें सामुदायिक कार्यों के लिए कुछ राशि स्थानीय समुदाय अथवा दानदाताओं द्वारा दी जाती है और शेष राशि राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाती है।

ग्राम विकास की यह अनूठी योजना है। इसमें जनता एक रुपया लगाकर तीन रुपये का निर्माण कार्य करा सकती है। इस योजना के अंतर्गत 30 प्रतिशत राशि जन सहयोग से और शेष 70 प्रतिशत राशि जिला ग्रामीण विकास अभिकरण और ग्राम पंचायत द्वारा उपलब्ध कराई जाती है। जनजाति उपयोजना क्षेत्रों में 20 प्रतिशत राशि जन सहयोग से और 80 प्रतिशत राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

गांवों और गरीबों के विकास के लिए सरकार सतत प्रयत्नशील है और चाहती है कि गांवों का समग्र विकास गांव के माध्यम से ही हो। इसी के लिए गांव का धन, गांव के द्वारा, गांव के विकास कार्यों के लिए उपलब्ध कराना ही "अपना गांव, अपना काम" योजना का मुख्य उद्देश्य है। योजना के तहत निर्माण कार्य ग्राम पंचायत/ग्राम सभा द्वारा गठित समिति के द्वारा कराया जाता है जिससे गांववासियों की सहभागिता बनी रहे। किंतु तकनीकी कार्य जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के माध्यम से करवाया जाता है।

'अपना गांव, अपना काम' योजना के तहत शाला भवन, औषधालय, पशु-चिकित्सालय, छात्रावास, बालवाड़ी, ग्राम पंचायत, धर्मशाला, वाचनालय आदि सामुदायिक भवनों का निर्माण कराया जा सकता है। गांव की खड़ंजा सड़कों, दो गांवों को जोड़ने वाली पुलिया, पेयजल के नलकूप का निर्माण या उसे गहरा कराने का कार्य, पानी निकास की पक्की नालियां और सार्वजनिक शौचालय आदि अनेक सार्वजनिक महत्व के कार्य करवाये जा सकते हैं। इस योजना के कार्यों का चयन स्थानीय समुदाय के दानदाता द्वारा किया जाता है किंतु उसकी स्वीकृति जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा दी जाती है।

योजना के तहत राजस्थान में 1992-93 में 1247 कार्य पूर्ण कराये गये जिन पर 14 करोड़ 20 लाख रुपये व्यय हुआ। इसमें जन सहयोग से प्राप्त राशि भी सम्मिलित है। 1993-94 में 1900 कार्य पूर्ण कराये गये हैं और 1201 कार्यों पर निर्माण कार्य चल रहा है। इस अवधि में इन कार्यों पर 20 करोड़ 31 लाख रुपये व्यय हुए। इसमें 6 करोड़ 71 लाख रुपये जन सहयोग से प्राप्त किये गये थे। इन कार्यों से 46 लाख 15 हजार मानव दिवस के बराबर रोजगार जुटाया गया।

निर्माण कार्यों के तहत झुंझुनू जिले के जखौड़ा ग्राम में 4 लाख 65 हजार रुपये व्यय कर 20 शय्याओं के राजकीय चिकित्सालय भवन का निर्माण ग्राम निर्माण कमेटी द्वारा कराया गया। इसमें एक लाख 39 हजार रुपये जन सहयोग से और 30 हजार रुपये ग्राम पंचायत ने व्यय किये। इसी प्रकार जिले के सांवलोद ग्राम में राजकीय कन्या माध्यमिक विद्यालय में साढ़े तेरह मीटर लंबे और 9 मीटर चौड़े हाल के निर्माण पर 3 लाख 35 हजार रुपये व्यय किये गये, जिसमें ग्रामवासियों ने 50 प्रतिशत सहयोग दिया।

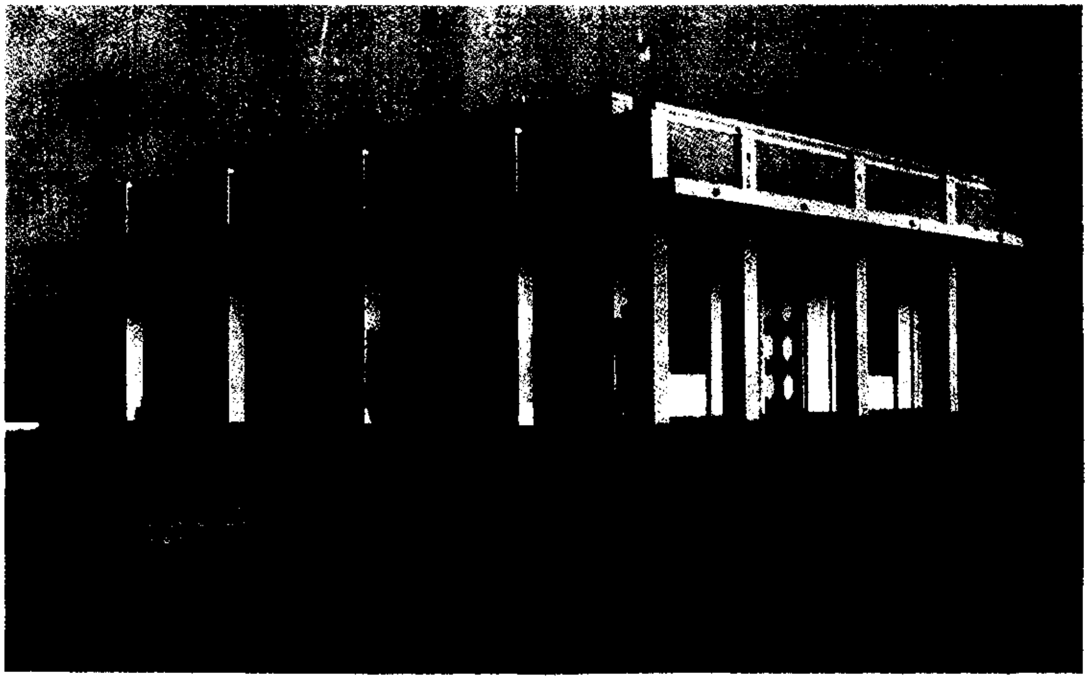

राजस्थान के झुंझुनू जिले के सांवलोद गांव के एक स्कूल में निर्मित हाल।
इसका निर्माण 'अपना गांव, अपना काम' योजना के अंतर्गत किया गया है।

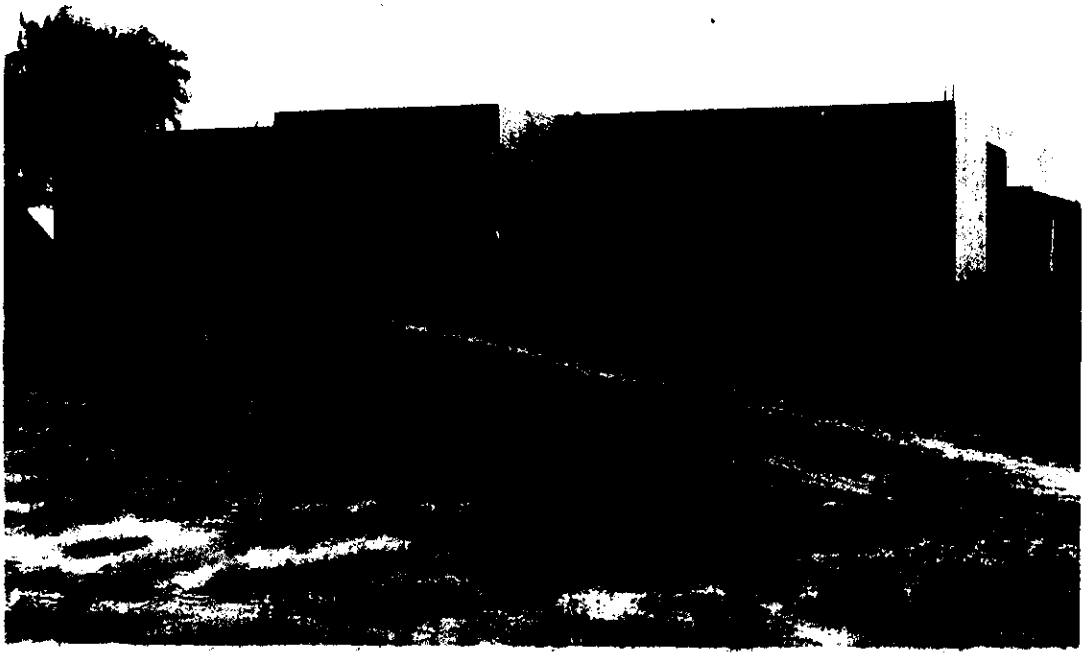

'अपना गांव, अपना काम' योजना के अंतर्गत झुंझुनू जिले के
जखौड़ा गांव में निर्मित राजकीय चिकित्सालय।

(लेख पृष्ठ 40 पर देखें)

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/94
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

R.N./708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/94
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54